(अज्ञान) से परे हैं। आप सुखस्वरूप हैं। नित्यता से प्रलय के पीछे रहनेवाले हैं। आप अनन्त दिव्य गुणों से युक्त हैं। महात्माओं और मुमुक्षुओं तथा भक्तों के आनन्ददाता हैं। आप देवों के देव हैं। आप चराचर के आत्मा हैं। हम आपके सर्वोत्तम तेज को अपने हृदय में देखते और अनुभव करते हुए अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति से आपको प्राप्त हों।

ओ३म् उदुत्यं जातवेदसं, देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्।। 2।। 15।।

यजुर्वेद 33। 31।। प्रस्कण्वः ऋषिः। सूर्यो देवता। निचृद्गात्री छन्दः। षड्जः स्वरः।।

(ऋग् 1। 50।। 1। यजु० 7। 41।। 8। 41। साम० पू० प्र० 1। 1। 3।। 11।। अथर्व० 13। 2। 16।। 20। 47। 13।।)

शब्दार्थ

उत्—अच्छी प्रकार से। उ—निश्चय से। त्यम्—उस पूर्वोक्त प्रभु को।

जातवेदसम्—चारों वेदों की उत्पत्ति के कारणरूप उत्पन्न हुए प्रकृति के सकल पदार्थों में व्यापक और सकल जगत् को जानने वाले प्रभु को।

देवम्—दिव्य गुणों से युक्त को। वहन्ति—प्रकाशित करती हैं व प्राप्त करते हैं।

केतवः—किरणें नानाविध जगत् के पृथक्-पृथक् रचनादि को बतलाने वाले ईश्वर के गुण, वेद, पदार्थ तथा पताकाएं।

दृशे—देखने के लिए। विश्वाय—सबके लिए। सूर्यम्—चराचर के आत्मा को।

भावार्थ

जिस महान् शक्ति से सकल ज्ञान के देने वाले चारों वेद उत्पन्न हुए हैं, जो सब पदार्थों में व्यापक है, जो प्रत्येक व्यवहार को जानता है, जो दिव्य गुणों की खान है, स्थावर और जंगम जगत् का सूत्रात्मा है, उस सर्वशक्तिमान् परमेश्वर को वेद की अद्भुत रचना के ज्ञापक गुण तथा अन्य पदार्थ लाल-पीली झण्डियों की भांति निश्चय से सभी प्रकार दिखाते हैं, जिससे कि सब जन देख सकें।।

ओ३म् चित्रं देवानामुदगादनीकं, चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः

आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा। 3।। 16।।

यजुर्वेद 13। 46।। विरूपः ऋषिः। सूर्यो देवता। निचृत्त्रिष्टप् छन्दः। धैवतः स्वरः।।

(ऋग्० 1। 115। 1।। यजु० 7। 42।। साम० पू० प्र० 6 (आ० का०) 3। 5। 3।। अथर्व० 13। 2। 35। 20। 107। 14।।) पंचमहायज्ञ-विधि के अनुसार य० 7। 42 में—कुत्स ऋषिः। सूर्यो देवता। भुरिगार्षी त्रिष्टुप् छन्दः धैवतः स्वरः।।

शब्दार्थ

चित्रम्—अद्भुतस्वरूप ईश्वर। देवानाम्—दिव्य गुणयुक्त विद्वानों के हृदय में।

उदगात्—अच्छी प्रकार से प्राप्त तथा प्रकाशित है।

अनीकम्—बलस्वरूप, नेता (युद्ध-सेना)

चक्षुः—प्रकाशक, उपदेशक, विज्ञानमय, विज्ञापक, सर्वसत्योपदेष्टा

मित्रस्य—द्रोहरहित मनुष्य, सूर्यलोक का अथवा प्राण का

वरुणस्य—उत्तम, श्रेष्ठ कर्मों तथा गुणों में वर्तमान मनुष्य का, जल-लोक अथवा अपान का।

अग्नेः—शिल्पविद्या-विशारद, अग्नि तथा बिजली के रूप, गुण, दाहादि के प्रकाशक मनुष्य का तथा अग्नि का

आ+प्रा—चारों ओर धारण करता है। द्यावा—द्युलोक को। पृथिवी—भूमि-लोक को। अन्तरिक्षम्—अन्तरिक्ष-लोक को। सूर्यः—जड़-चेतन जगत् का सूत्रात्मा। आत्मा—निरन्तर सर्वत्र-व्यापक। जगतः—चेतन जगत् का। तस्थुषः—जड़ जगत् का। च—और। स्वाहा—सुवचन, सत्यवचन, स्वात्मबुद्धि, आहुति।

(सु आहेति वा, स्वा वागाहेति वा, स्वम् आहेति वा, स्वाहुतं हविर्जुहोति वा। निरुक्त 8। 20) अर्थ इस प्रकार है :

1. अच्छा, कोमल, मधुर, कल्याणकारी प्रिय वचन सबसे सदा बोलना चाहिए।

2. जैसा मन में वैसा वाणी से बोलना अर्थात् सदा सत्य बोलना चाहिए।

3. अपने पदार्थ को ही 'अपना' कहना चाहिए, दूसरे की वस्तु का स्वयं स्वामी नहीं बनना चाहिए।

4. अच्छी प्रकार की सामग्री से सदा हवन करना चाहिए।

भावार्थ

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता पिता ! आप अद्‌भुत-स्वरूप हैं, विद्वानों के हृदयों में सदा विराजमान हैं। सब दु:खों को तथा काम-क्रोधादि शत्रुओं के हनन के लिए आप बलरूप हैं। आपके बिना मनुष्यों को सुखकर और कौन हो सकता है ? आप प्राण अपान के, सबको मित्र की दृष्टि से देखने वाले, जल और अग्निविद्या में निपुण जनों के और सूर्यादि लोकों के प्रकाशक हैं। आप पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक आदि सारे जगत् को रचकर सबको धारण कर रहे हैं। आप सर्वव्यापक अर्थात् चर और अचर जगत् के सूत्रात्मा हैं। यह सुन्दर ध्वनि मेरे हृदय-मन्दिर से निकल रही है। आपकी दया से हम सब सदा मीठा बोलें और प्रयत्न से अग्निहोत्र आदि यज्ञ किया करें।

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतम् अदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।। 4।। 17।।

यजुर्वेद 36 । 24 ।। दध्यङ्ङाथर्वणः ऋषिः । सूर्यो देवता । भुरिग ब्राह्मी त्रिष्टुप छन्दः । धैवतः स्वरः ।। (ऋग्० 7 । 66 । 16 ।।)

शब्दार्थ

तत्—वह प्रसिद्ध जगत्कर्ता। चक्षुः—सर्वद्रष्टा। देवहितम्—विद्वानों का हितकारी प्रभु। पुरस्तात्—सर्वत्र व्यापक, विज्ञानरूप। शुक्रम्—शुद्धस्वरूप। उच्चरत्—प्रलय के पीछे रहने वाला। पश्येम—हम देखें। शरदः—ऋतु, काल, वर्ष। शतम्—सौ (100)। जीवेम—हम जीवें। शृणुयाम—हम सुनें। प्रब्रवाम—हम बोलें, उपदेश करें। अदीनाः—स्वतन्त्र (आज़ाद)। स्याम—हम होवें। भूयः—अधिक। च—और शतात्—सौ (100) से।

भावार्थ

प्रभो ! आप सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। आप सब कुछ देखने वाले हैं। विद्वानों, धर्मात्माओं और अपने सेवकों के कल्याणकारी हैं। आप सृष्टि से भी पूर्व विद्यमान रहने वाले हैं। आप शुद्ध स्वरूप और प्रलय के भी पीछे रहने वाले हैं। आपकी कृपा से हम सौ वर्ष तक आंखों से देखते रहें,

सौ वर्ष तक जीते रहें, सौ वर्ष तक आपके गुणों में श्रद्धा रखते हुए उनको सुनते-सुनाते और उपदेश करते रहें। आपकी उपासना करते हुए, सौ वर्ष किसी के आगे दीन होकर हाथ न फैलावें, दास न रहें, स्वतन्त्र और धनाढ्य बनें। इसी प्रकार सौ वर्ष गं अधिक भी आपकी अपार दया से जीएं, सुनें, बोलें और आपके पवित्र ज्ञान—वेद भगवान्—को पढ़कर उसका उपदेश करें।

गायत्री मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।। 18।।

शब्दार्थ

ओ३म्—सर्वत्र, सदा सर्वथा रक्षक। यह शब्द अकार, उकार और मकार से बना है। 'अकार' के अर्थ विराट्, अग्नि, विश्व; 'उकार' के अर्थ हिरण्यगर्भ, वायु, तेजस् और 'मकार' के अर्थ ईश्वर, आदित्य, प्राज्ञ हैं। इस एक नाम से प्रभु के अनेक नामों का ग्रहण होता है, अतः यह सर्वोत्तम नाम है।

भूः—प्राणाधार। भुवः—दुःखनाशक। स्वः—सुखस्वरूप,

सुखदाता। तत्—वह प्रसिद्ध प्रभु। सवितुः—उत्पन्न करने वाले का। वरेण्यम्—सर्वश्रेष्ठ। भर्गः—शुद्धस्वरूप, पापनाशक। देवस्य—दिव्यस्वरूप का। धीमहि—हम ध्यान करते हैं। धियः— बुद्धियों को। यः—जो। नः—हमारी। प्रचोदयात्—प्रेरणा करे।

भावार्थ

हे दयालु परमात्मन ! आप अपनी असीम कृपा से हमारी सदा रक्षा करते हैं। आप ही हमारे जीवनाधार हैं। अपने सेवकों के दुःखों को दूर करके उनको सुख देने वाले हैं। आप सर्वत्र सुप्रतिष्ठित और सुप्रसिद्ध हैं। आप सर्वोत्तम, शुद्ध, पवित्र और ज्ञानस्वरूप हैं। आपसे ही यह सारा जगत् उत्पन्न हुआ है। आप ही सकल शुभ गुणों की खान हैं। आपका हम प्रतिदिन ध्यान करें और आप हमें विवेकशीलता, धारणावती मेधा और सद्बुद्धि प्रदान करें।

समर्पण

हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपयानेन जपोपासनादिकर्मणा

धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।

हे ईश्वर दयानिधे ! आपकी कृपा से जो-जो उत्तम काम हम लोग करते हैं, वे सब आपके अर्पण हैं। जिससे हम लोग आपको प्राप्त हो के, धर्म—जो सत्य न्याय का आचरण करना है, अर्थ—जो धर्म से पदार्थों की प्राप्ति करना है, काम—जो धर्म और अर्थ से इष्ट भोगों का सेवन करना है, और मोक्ष—जो सब दुःखों से छूटकर सदा आनन्द में रहना है, इन चार पदार्थों की सिद्धि हमको शीघ्र प्राप्त हो।

नमस्कार मन्त्र

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च।। 19।।

य० 16। 41।। परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः ऋषिः। रुद्राः देवता। स्वराडार्षी बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः।।

शब्दार्थ

नमः—नमस्कार हो। शम्भवाय—शान्ति के स्रोत के लिए। च—और। मयोभवाय—सुख के स्रोत के लिए।

शंकराय—शान्ति के लिए। मयस्कराय—सुखकारी के लिए। शिवाय—कल्याणस्वरूप के लिए। शिवतराय—अत्यन्त मंगलस्वरूप के लिए।

भावार्थ

प्रभो ! आप सुखस्वरूप हैं, सर्वोत्तम सुखों को देने वाले हैं, आपको नमस्कार हो। आप कल्याण के कर्त्ता, मोक्षस्वरूप हैं, आप ही अपने भक्तों को सुख और शान्ति देने वाले और उनको धर्मकार्यों में लगाने वाले हैं, आपको नमस्कार हो। आप अत्यन्त मंगलस्वरूप हैं और धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले हैं। आपको हमारा अत्यन्त नम्रता, परम श्रद्धा और भक्ति से बार-बार नमस्कार हो।

ओं शान्तिः ! शान्तिः ! ! शान्तिः ! ! ! प्यारे पिता ! आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दुःखों अर्थात् इन तीन पापों को दूर करो।

प्रणव जाप

सन्ध्या करने के पश्चात् सबको ओ३म् का जाप करना चाहिए। शास्त्रों में इसकी बड़ी महिमा गाई गई है। श्री स्वामीजी महाराज भी अपनी प्रसिद्ध पुस्तक सत्यार्थप्रकाश के तीसरे और सातवें समुल्लास में इस पर बड़ा बल देते हैं। इससे मन की एकाग्रता, सात्त्विक भाव, शान्ति तथा आनन्द प्राप्त होता है। योगसाधन की तत्परता का यह प्रथम अंग है। जितना अधिक समय तथा रुचि होगी उतनी ही अधिक योगानन्द की प्राप्ति होगी।

ब्रह्म-स्तोत्र

प्रणव जाप के पश्चात् जितना समय दे सकें, ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना उपासना करनी चाहिए। परमेश्वर की स्तुति करने से उसमें श्रद्धा उत्पन्न होती है। उनके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण, कर्म, स्वभाव का सुधार होता है। इसकी प्रार्थना करने से निरभिमानता, उत्साह तथा सहायता

प्राप्त होती है। उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होता है। नीचे कुछ सुन्दर मन्त्र तथा श्लोक दिए जाते हैं, उन्हें गाइये, मन प्रसन्न होगा।

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा, एकं रूपं बहुधा यः करोति। तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम्।। 1।।

प्रभो ! तुम एक हो। सारे ब्रह्माण्ड को वश में रखने वाले हो। सब प्राणियों के अन्तःकरण में विराजमान हो। एक प्रवृत्ति से नाना प्रकार के पदार्थ उत्पन्न करते हो। जो धीर, विद्वान्, योगी आपको अपनी आत्मा में ठहरा हुआ देखते हैं, उन्हीं को सच्चा सुख प्राप्त होता है, दूसरों को नहीं।

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्, एको बहूनां यो विदधाति कामान्। तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम्।। 2।।

प्रभो ! आप नित्यस्वरूप हैं, चेतनरूप हैं, आप एक हैं, आप भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं। आपको

जो लोग अपनी आत्मा के अन्दर साक्षात् कर देखते हैं, उनको वास्तविक तथा निरन्तर शान्ति प्राप्त होती है।

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं, नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः। तमेव भान्तमनुभाति सर्वं, तस्य भासा सर्वमिदं विभाति।। 3।।

हे सर्वशक्तिमान् प्रभो ! आपके प्रकाश के तुल्य न तो इस सूर्य का प्रकाश है, न चन्द्रमा और तारों का और न ही बिजली का। अग्नि का तो कहना ही क्या ? आपके प्रकाश से ही ये सब प्रकाश वाले हैं, आप प्रकाशस्वरूप हैं।

ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्ताद् ब्रह्म, पश्चाद् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण। अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्म, एवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्।। 4।।

प्रभो ! आप सबसे बड़े, नित्यस्वरूप हैं, आप सर्वत्र व्यापक हैं। आगे-पीछे, दायें-बायें, नीचे-ऊपर सब जगह फैले हुए हैं। सारे संसार में सबसे उत्तम आप ही हैं।

इहैव सन्तोऽथ विद्मस्तद् वयम्, न चेदवेदीर्महतो विनष्टिः। ये तद्विदुरमृतास्ते भवन्ति, अथेतरे दुःखमेवापि यन्ति।। 5।।

प्रभो ! इसी जन्म के अन्दर यदि हम आपको साक्षात् कर लें तो अच्छी बात है, अन्यथा महान् अनर्थ होगा। जो जन आपको जान जाते हैं वे अमर हो जाते हैं, दूसरे दुःख के भागी बनते हैं।

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता, पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः। स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता, तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम्।। 6।।

प्रभो ! आपके न हाथ हैं, न पांव हैं, परन्तु सबको ग्रहण करने वाले हैं, और सबसे अधिक वेग वाले हैं। आपकी आंखें नहीं, परन्तु देखते सब कुछ हैं। आपके कान नहीं, परन्तु सुनते सब कुछ हैं। आप सबको जानते हैं, परन्तु आपको पूर्णतया जानने वाला कोई नहीं। आप ही सबके नेता,महाप्रभु, सर्वशक्तिमान् हैं।

अणोरणीयान् महतो महीयान्, आत्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमक्रतुं पश्यति वीतशोको, धातुः प्रसादान्महिमानमीशम्।। 7।।

प्रभो ! आप सूक्ष्म से सूक्ष्म हैं। आप महान् से महान्

हैं। जीवात्मा के भीतर छिपे हुए हैं। दयामय ! आपकी दया से ही आपके शुभ दर्शन हो सकते हैं, अन्यथा नहीं।

सूक्ष्मातिसूक्ष्मं कलिलस्य मध्ये, विश्वस्य स्रष्टारमनेकरूपम् । विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं, ज्ञात्वा शिवं शान्तिमत्यन्तमेति।। 8।।

प्रभो ! संसार में आप अति सूक्ष्म हैं। अनेक रूप संसार के स्रष्टा हैं, सारे ब्रह्माण्ड को घेरे हुए हैं। आपको जानकर ही हम सच्ची शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

स एव काले भुवनस्य गोप्ता, विश्वस्याधिपः सर्वभूतेषु गूढः। यस्मिन् युक्ता ब्रह्मर्षयो देवाश्च, तमेव ज्ञात्वा मृत्युपाशांश्छिनत्ति।। 9।।

सर्वपालक प्रभो ! आप ही समय पर सबकी रक्षा करते हैं। आप ही सबके स्वामी हैं। आप सब प्राणियों के अन्दर हैं। आपको ही ऋषि-मुनि योगाभ्यासी ध्याते हैं, आपको जानकर ही मृत्यु के जाल को काट सकते हैं।

एष देवो विश्वकर्मा महात्मा, सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः। हृदा मनीषी मनसाऽभिक्लृप्तो, य एतद्

विदुरमृतास्ते भवन्ति।। 10।।

दिव्यस्वरूप ! आप ही सकल जगत को बनाने वाले हैं। आप सर्वमहान् सदा सबके हृदय में वास करते हैं और जो हृदय और मन से आपकी खोज करते हैं, वे अमर पद को पा जाते हैं।

न सदृशे तिष्ठति रूपमस्य, न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम्। हृदा हृदिस्थं मनसा य एनम्, एवं विदुरमतास्ते भवन्ति।। 11।।

निराकार प्रभो ! आपका कोई रूप नहीं, आपको इन आंखों से कोई नहीं देख सकता। जो हृदय में आपको मन द्वारा जानते हैं, वही अमर हो जाते हैं।

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते, न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते। पराऽस्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते, स्वभाविकी ज्ञानबलक्रिया च।। 12।।

प्रभो ! आप स्वयं सब काम कर सकते हैं। दूसरों की सहायता की आपको आवश्यकता नहीं पड़ती। आपके तुल्य इस संसार में कोई नहीं, तो आपसे अधिक कौन हो सकता

है ? जो आपकी अद्भुत शक्ति है, नाना प्रकार से वह प्रकट हो रही है। आपमें ज्ञान, बल तथा काम करने की शक्ति स्वभाव से ही है।

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः, सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः, साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च।।
13।।

प्रभो! आप एक हैं, दिव्यस्वरूप हैं, सबमें व्यापक हैं, सबको कर्मों का फल देने वाले हैं, सर्वस्रष्टा हैं, केवल सुखरूप, चेतनास्वरूप और निर्गुण हैं।।

नमस्ते सते ते जगत्कारणाय, नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय।
नमोऽद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय।।
14।।

हे सदा रहनेवाले, जगत् के कारण प्रभो ! तुम्हें नमस्कार हो। सर्वलोक के आश्रय, चेतना स्वरूप ! तुम्हें प्रणाम हो। सुखस्वरूप, मुक्ति के दाता ! तुम्हें हम नमस्कार करते हैं। हे सर्वव्यापक परब्रह्म ! तुम्हें हमारा बार-बार प्रणाम हो।

त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यं, त्वमेकं जगत्पालकं

स्वप्रकाशम्। त्वमेक जगत्कर्तृ, पातृ प्रहर्तृ, त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ।। 15।।

प्रभो ! आप ही हमारी रक्षा करनेवाले हैं, आप ही श्रेष्ठ हैं, आप ही जगत् के पालक और स्वप्रकाशक हैं। परमात्मन् ! आप ही अकेले जगत्कर्ता, रक्षक और संसार-कर्ता हैं। आप ही सबसे बड़े, अचल और विकार-रहित हैं।

भयानां भयं भीषणं भीषणानां, गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम्। महोच्चैः पदानां नियन्तृ त्वमेकं, परेषां परं रक्षणं रक्षाणानाम्।। 16।।

परमात्मन् ! आप भयों को भय देने वाले हैं। आप ही हमारी गति हैं। पवित्रों के पवित्रकर्ता आप हैं। आप महाराज के महाराज हैं, परे से भी परे हैं और रक्षा करने वालों के भी रक्षक हैं।

वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो, वयं त्वां जगत्साक्षिरूपं नमामः। सदेकं निधानं निरालम्बमीशम्, भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः।। 17।।

परमात्मन् ! हम आपको ही स्मरण करते रहें। आपका

पूजन करें। हम आपको ही सबका साक्षी जानकर पूजें। आप एक हैं। आप सबके आधार हैं और अपने आधार भी स्वयं ही हैं। संसाररूपी समुद्र में रक्षा करने वाले पोत (जहाज़) आप ही हैं। हे प्रभो ! हम आपको ही प्राप्त हों।

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं, तं देवतानां परमं हि दैवतम्।
पति पतीनां परमं परस्ताद्, विदाम देवं भुवनेशमीड्यम।। 18।।

प्रभो ! आप महेश्वरों के भी महेश्वर हैं। देवताओं के भी आप पूजनीय देव हैं। आप पतियों के भी अधिपति हैं। हे सर्वजगत् के शासक ! हम आपकी स्तुति तथा उपकारों का गान और चिन्तन सदा करते ही रहें।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव।। 20।।

भगवन् ! आप ही हमारे माता-पिता हैं, आप ही हमारे बन्धु और सखा हैं। स्वामिन् ! आप ही हमारे विद्या तथा धन हैं। हे नाथ ! आप ही मेरे सर्वस्व हैं और आप ही पूजनीय उपास्य देव हैं। आपके स्थान में किसी अन्य का भूलकर भी मैं कभी पूजन न करूं।

प्रार्थना-भजन

भजन 1

1—उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहां जो सोवत है ?
जो जागत है सो पावत है,
जो सोवत है सो खोवत है।।
2—टुक नींद से आंखें खोल ज़रा,
और अपने ईश से ध्यान लगा।
यह प्रीति करन की रीति नहीं,
प्रभु जागत है तू सोवत है।।
3—जो कल करना है आज कर ले,
जो आज करना है अब कर ले।
जब चिड़ियों ने चुग खेत लिया,
फिर पछताए क्या होवत है।।
4—नादान भुगत करनी अपनी,
ऐ पापी पाप में चैन कहां।
जब पाप की गठरी शीश धरी,
फिर शीश पकड़ क्यों रोवत है।।

भजन 2

1—विश्वपति के ध्यान में,
जिसने लगाई हो लगन।
क्यों न हो उसको शान्ति,
क्यों न हो उसका मन मगन ?
2—काम, क्रोध, लोभ, मोह,
शत्रु हैं सब महाबली।
इनके हनन के वास्ते,
जितना हो तुझसे कर यतन।
3—ऐसा बना स्वभाव को,
चित्त की शान्ति से तू।
पैदा न हो ईर्ष्या की आंच,
दिल में करे नहीं जलन।
4—मित्रता सबसे मन में रख,
त्याग के वैर-भाव को।
छोड़ दे टेढ़ी चाल को,
ठीक कर तू अपना चलन।।

5—उससे अधिक न है कोई,
जिसने रचा है यह जगत्।
उसका ही रख तू आसरा,
उसकी ही तू रख शरण।।

6—छोड़ के राग-द्वेष को,
मन में तू उसका ध्यान कर।
तुझ पै दयाल होवेंगे,
निश्चय है यह परमात्मन्।।

7— आप दया स्वरूप हैं,
आप का ही है आसरा।
कृपा की दृष्टि कीजिए,
मुझ पै हो जब समय कठिन।।

8—मन में मेरे हो चांदना,
मोक्ष का रास्ता मिले।
मार के मन जो 'केवल',
इन्द्रियों को करे दमन।।

भजन 3

1—करो हरि नैया मेरी पार।
तुम बिन कौन बचावन हार,
यह जग पारावार।।
2—पाप-प्रलोभन भंजन भगवन्,
खींच करो मंझधार।।
3—मन-क्रेवट माया के मद में,
घेरा पंच-मकार।।
4—ढीली पड़ी सुरत की डोरी,
स्वामिन् तुम्हें बिसार।।
5—बार-बार टकरात दुसह दुख,
टूट गया पतवार।।
6—नाव पुरानी झांझरि हो गई,
क्षण में डूबनहार।।
7—अब तो हाथ गहो करुणाकर,
पार करो कर्तार।।

भजन 4

पिता जी तुम पतित-उद्धारनहार !

1—दीन-शरण, कंगाल के स्वामी,
दुःख के मोचनहार।।1।।

2—इस जग माया-जाल भ्रमण में,
सूझे न सार-असार।।2।।

3—सत्य ज्ञान बिन अंध-सम डोलें,
करें असत्य आचार।।3।।

4—पाप-प्रवाह भयंकर जल में,
डूबत है मंझधार।। 4।।

5—तुम्हारी दया बिन को समरथ है,
करे दीनन को प्यार।।5।।

देवयज्ञ

1–हवन के नाम तथा व्याख्या

हवन के नाम 'होम', 'अग्निहोत्र' अथवा 'देवयज्ञ' भी हैं। हवन का अर्थ 'दान' है। जिस कर्म से अग्नि (ज्ञानस्वरूप परमेश्वर) की आज्ञा पालन करने के लिए भौतिक अग्नि में सुगन्ध आदि पदार्थों का दान किया जाता है, वह कर्म 'हवन' कहलाता है। जिन मन्त्रों से हवन किया जाता है, वे 'हवन-मन्त्र' कहलाते हैं।

प्रातः और सायंकाल तथा आनन्दोत्सवों पर हवन करना सब मनुष्यों का कर्त्तव्य है। हवन करने से संसार में बुद्धि, वृद्धि, शूरता, धीरता तथा उत्तम स्वच्छता फैलती है।

2–अग्निहोत्र का महत्त्व

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।। 1।।

मनुष्य को चाहिए कि कर्त्तव्य कर्मों को करता हुआ ही सौ वर्ष की पूर्ण आयु जीने की कामना करे।

अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।। 2।।

मनुष्य कर्म द्वारा मृत्यु को पार करके विद्या द्वारा अमृत को प्राप्त कर सकता है।

सायं सायं गृहपतिर्नो अग्निः। प्रातः प्रातः सौमनसस्य दाता।। 3।।

सब घरों में सायं तथा प्रातः दोनों समय परमेश्वर तथा भौतिक अग्नि की प्रतिष्ठा हो।

सायं प्रातस्तु जुहुयात्, सर्वकालमतन्द्रितः।। 4।।

सदा सायं-प्रातः हवन करना चाहिए।

अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः।। 5।।

स्वर्ग की कामना करने वाला मनुष्य होम किया करे।

स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्याद् दैवे चैवेह कर्मणि। देवकर्मणि युक्तो हि, बिभर्त्तीदं चराचरम्।। 6।।

मनुष्य को चाहिए कि स्वाध्याय और देवयज्ञ में नित्य लगा रहे। देवयज्ञ में लगा हुआ जड़ और चेतन दोनों प्रकार के जगत् को वह धारण करता है।

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यग्, आदित्यमुपतिष्ठते। आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ।। 7।।

अग्नि में डाली हुई आहुति भली भांति सूर्य को प्राप्त होती है। सूर्य से वर्षा होती है, वर्षा से अन्न होता है और फिर प्रजाएं होती हैं।

अग्निहोत्रं सायं प्रातः गृहाणां निष्कृतिः स्विष्टं सुहुतं यज्ञमृतूनां परायणं स्वर्गस्य लोकस्य ज्योतिः।। 8।।

सायं-प्रातः अग्निहोत्र घरों को शुद्ध करनेवाला है। श्रद्धापूर्वक सम्पूर्ण किया हुआ यज्ञ, यज्ञों और ऋतुओं की पराकाष्ठा है। यज्ञ स्वर्ग-लोक की ज्योति है।

नौर्हि वा एषा स्वर्ग्या यदग्निहोत्रम्।। 9।।

जो अग्निहोत्र है, वह निश्चय करके स्वर्ग को प्राप्त कराने वाली नौका है।

अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवचने च।। 10।।

अग्निहोत्र और स्वाध्याय तथा उपदेश भी सब मनुष्यों को करना चाहिए।

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः। यज्ञाद् भवति पर्जन्यो, यज्ञः कर्मसमुद्भवः।। 11।।

अन्न से समस्त प्राणी उत्पन्न होते हैं, अन्न मेघ से

पैदा होता है। मेघ यज्ञ से उत्पन्न होता है और यज्ञ कर्म से उत्पन्न होता है।

अहन्यहनि ये त्वेतानकृत्वा भुञ्जते स्वयम्। केवलं मलमश्नन्ति ते नराः न च संशयः।। 12।।

प्रतिदिन जो जन अग्निहोत्र आदि महायज्ञों को किए बिना स्वयं अन्नादि खाते-पीते हैं, वे मनुष्य केवल 'मल' खाते हैं, इसमें संशय नहीं।

3–यज्ञ-देश

यज्ञ-स्थल पवित्र तथा शुद्ध होना चाहिए, जहां पर्याप्त वायु आ सके।

4–यज्ञशाला

यज्ञ-मण्डप पक्का बनवा रखना चाहिए। ऊपर ध्वजा लहराये। वेदी प्रतिदिन गोमय से लेपी जाये। हल्दी आदि से चित्रित हो।

5–यज्ञकुण्ड का परिमाण

आहुतियों के परिमाण के अनुसार छोटा अथवा बड़ा होना चाहिए। चौरस, ऊपर से चार गुना, नीचे से चौथाई

रखकर बना लो, अथवा बना हुआ ले लो।

6–यज्ञ-समिधा

पलाश (ढाक), शमी (जंड), पीपल, बड़, गूलर, आम, बिल्व आदि की सूखी हुई, बिना कीड़े की, समिधा बर्तनी चाहिए।

सामग्री ऋतुओं के अनुसार चार प्रकार की सुगन्धित, पुष्टिकारक, मिष्ट और रोगनाशक होनी चाहिए।

7–सामग्री

1. वसन्त—छली, तालीसपत्र, पत्रज, दाख, लज्जावती, शीतलचीनी, कपूर, चीड़, देवदारु, गिलोय, अगर, तगर, केशर, इन्द्र जौ, गुग्गुल, कस्तूरी, तीनों चन्दन, जावित्री, जायफल, धूप, सरसों, पुष्करमूल, कमलगट्टा, मजीठ, वनकचूर, दारचीनी, गूलर की छाल, तेजफल, शंखपुष्पी, चिरायता, खस, गोखरू, खांड, गो-घृत, ऋतुफल, भात व मोहनभोग, जंड की समिधा।

2. ग्रीष्म—मुरा, वायविंडग, कपूर, चिरौंजी, नागरमोथा, पीला चन्दन, छरीला, निर्मली, शतावर, खस, गिलोय, धूप,

दारचीनी, लौंग, कस्तूरी, चन्दन, तगर, भोजपत्र, भात, कुश की जड़, तालीसपत्र, पद्माख, दारु हल्दी, लाल चन्दन, मजीठ, शिला रस, केर, जटामांसी, नेत्रबाला, इलायची बड़ी, उन्नाव, आमले, मूंग के लड्डू, ऋतुफल, चन्दन चूरा।

3. वर्षा—काला अगर, पीला अगर, जौ, चीड़, धूप, सरसों, तगर, देवदारु, गुग्गुल, नकछिकनी, राल, जायफल, मुण्ड, गोला, निर्मली, कस्तूरी, मखाने, तेजपत्र, कपूर, बनकचूर, बेल, जटामांसी, छोटी इलायची, बच, गिलोय, तुलसी के बीज, वायविडंग, कमलडण्डी, शहद, श्वेत चन्दन का चूरा, ऋतुफल, नागकेशर, ब्राह्मी, चिरायता, उड़द के लड्डू, छुहारे, शंखाहुली, मोचरस, विष्णुकांता, गोघृत, खांड, भात। वर्षा ऋतु में सामग्री में अन्न नहीं डालना चाहिए। इससे सामग्री में कृमि पड़ जाते हैं। कृमियुक्त सामग्री की आहुति देने की अपेक्षा हवन न करना ही अच्छा है।

4. शरद्—श्वेत, लाल और पीला गुग्गुल, नागकेशर, इलायची बड़ी, गिलोय, चिरौंजी, विदारीकंद, गूलर की छाल,

ब्राह्मी, दारचीनी, कपूर कचरी, मोचरस, पित्तपापड़ा, अगर, भारंगी, इन्द्र जौ, रेणुका, मुनक्का, असगंध, शीतलचीनी, जायफल, पत्रज, चिरायता, केशर, कस्तूरी, किशमिश, खांड, जटामांसी, तालमखाना, सहदेवी, ढाक की समिधा, धान की खील, खीर और विष्णुकांता, कपूर, ऋतुफल, गोघृत।

5. हेमन्त—कुठ, मुसली, गंधक, कोकिला, गुड़वांछ, पित्तपापड़ा, कपूर कचरी, नकछिकनी, गिलोय, पटोलपत्र, दारचीनी, भारंगी, सौंफ, मुनक्का, कस्तूरी, चीड़, गुग्गुल, अखरोट, रासना, शहद, पुष्करमूल, केशर, छुहारे, गोखरू, कौंच के बीज, कांटेदार गिलोय, पर्पटी, बादाम, मुलहटी, काले तिल, जावित्री, लाल चन्दन, मुश्कबाला, तालीसपत्र, रेणुका, गरी, बिना लवण की खिचड़ी, देवदार।

6. शिशिर—अखरोट, कपूर, वायविडंग, गुछमुण्डी, मोचरस, गिलोय, मुनक्का, रेणुका, काले तिल, कस्तूरी, तेजपत्र, केशर, चन्दन, चिरायता, छुहारे, तुलसी के बीज, गुग्गुल, चिरौंजी, काकड़ासिंगी, खांड, शतावर, दारुहल्दी, शंखपुष्पी, पद्माख, कौंच के बीज, जटामांसी, भोजपत्र,

मोहनभोग (हलवा)।

वसन्त—चैत, वैशाख। मार्च, अप्रैल।

ग्रीष्म—ज्येष्ठ, आषाढ़। मई, जून।

वर्षा—श्रावण, भाद्रपद। जुलाई, अगस्त।

शरद्—आश्विन, कार्तिक। सितम्बर, अक्तूबर।

हेमन्त—मार्गशीर्ष, पौष। नवम्बर, दिसम्बर।

शिशिर—माघ, फाल्गुन। जनवरी, फरवरी।

8—यज्ञ-घृत

गाय का, अभाव में भैंस का ताज़ा, स्वच्छ, छना हुआ होना चाहिए। हो सके तो कस्तूरी आदि पदार्थ बीच में डाल लें।

9—स्थाली पाक

खिचड़ी, हलवा आदि की बना लें।

10—यज्ञ-पात्र

शक्ति तथा इच्छानुसार सोने, चांदी, तांबे, लोहे व लकड़ी के होने चाहिए। 1—घृत-पात्र, 2—सामग्री-पात्र, 3—आचमन-पात्र, 4—जल-पात्र, 5—स्रुवा, 6—जल छिड़कने

का पात्र, 7—शेष रखने का पात्र, 8—चिमटा, 9—पंखा, 10—हवन कुण्ड।

ईश्वर-स्तुति-प्रार्थनोपासना-मन्त्र

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानी परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव।। 1।।

अर्थ—हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्धस्वरूप, सर्वसुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कीजिए। जो कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव वाले पदार्थ हैं, वे सब हमको प्राप्त कराइए।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे, भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।। 2।।

अर्थ—जो स्वप्रकाशस्वरूप है और जिसने प्रकाश करनेहारे सूर्य-चन्द्रमा आदि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किए हैं, जो सम्पूर्ण जगत् का प्रसिद्ध स्वामी चेतनरूप है, जो सब जगत् से पूर्व वर्तमान था, जो इस भूमि, सूर्यादि को धारण

कर रहा है, हम लोग उस सुखस्वरूप परमात्मा की योगाभ्यास और अति प्रेम से विशेष भक्ति किया करें।

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। 3।।

जो आत्मज्ञान का दाता, शरीर, आत्मा और समाज के बल का देनेहारा, जिसकी सब विद्वान् लोग उपासना करते हैं और न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं, जिसका आश्रय ही मोक्ष-सुखदायक है जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस सुखस्वरूप सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति अर्थात् उसकी आज्ञा-पालन करने में तत्पर रहें।

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव। य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। 4।।

अर्थ—जो चेतन और जड़ जगत् का अपनी अनन्त महिमा से एक ही राजा है, जो मनुष्य और गौ आदि प्राणियों

के शरीर की रचना करता है, उस सुखस्वरूप, सकलैश्वर्य के देनेहारे परमात्मा की हम अपनी सकल उत्तम सामग्री से विशेष भक्ति करें।

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः। यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। 5।।

अर्थ—जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य आदि और भूमि को धारण किया है, जिस जगदीश्वर ने दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है, जैसे आकाश में सब लोक-लोकान्तरों में पक्षी उड़ते हैं, वैसे ही वह सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस सुखदायक, कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें।

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्।। 6।।

अर्थ—हे सब प्रजा के स्वामिन् परमात्मन् ! आपसे भिन्न कोई इन सब उत्पन्न हुए जड़, चेतनादिकों का

तिरस्कार नहीं कर सकता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग आपका आश्रय लेवें और इच्छा करें, वह-वह हमारी कामना सिद्ध होवे, जिससे हम लोग धनैश्वर्य के स्वामी हों।

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवा अमृतमानशानास् तृतीये धामन्नध्यैर-यन्त।।7।।

अर्थ—हे मनुष्यो ! वह परमात्मा हम लोगों को भ्राता के समान सुखदायक, सकल जगत् का उत्पादक सब कामों का पूर्ण करनेहारा, सम्पूर्ण लोक-मात्र और उनके नाम, स्थान तथा उत्पत्ति आदि को जानता है और जिस सांसारिक दुःख-सुख से रहित नित्यानन्दयुक्त, मोक्षस्वरूप धारण करनेहारे परमात्मा में, मोक्ष को प्राप्त होके, विद्वान् स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। हम सदा उसकी भक्ति किया करें।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि

विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम।। 8।।

अर्थ—हे स्वप्रकाश ! ज्ञानस्वरूप ! सब जगत् के प्रकाश करनेहारे, सकल सुखदाता परमेश्वर ! आप सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, अतः कृपा करके हम लोगों को विज्ञान, राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराइए, और हमसे कुटिलतायुक्त पाप-रूप कर्म को दूर कीजिए ! इस कारण हम लोग आपकी बहुत प्रकार की स्तुति सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यंचः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।। अथर्व० 3.30.3
भाई (अपने) भाई से, बहिन (अपनी) बहिन से द्वेष न करे। सौहार्द वाले समान व्रत वाले होकर भद्र भाव से वचन बोलो।

अथ स्वस्तिवाचनम्

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।। 1।।

पहले ही से जगत् को धारण करने वाले हवन, विद्या, दान और शिल्प क्रिया के प्रकाशक, प्रत्येक ऋतु में पूजनीय, जगत् के सुन्दर पदार्थों को देने वाले, रमणीय रत्नादिकों के पोषण करनेवाले अग्नि की मैं स्तुति (उपासना) करता हूं।

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये ।। 2।।

हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर ! जैसे पुत्र के लिए पिता ज्ञानदाता होता है, वैसे आप हमारे लिए सुख के हेतु पदार्थों की प्राप्ति कराने वाले होवें।

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिर-नर्वणः। स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना।। 3।।

हे ईश्वर ! अध्यापक और उपदेशक हमारा कल्याण करें, वायु सुख का सम्पादन करे, अखण्डित प्रकाश वाली विद्युत-विद्या हमारा कल्याण करे। पुष्टिकारक मेघादि हमारा कल्याण करें। अन्तरिक्ष और पृथ्वी हमारे लिए कल्याणकारी हों।

स्वस्तये वायुमुपब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः। बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः।। 4।।

हम स्वस्ति के लिए वायु और चन्द्रमा की उपासना करते हैं। संसार का जो स्वामी है, वह हमारी स्वस्ति करे। अनेक सहायकों से युक्त बृहस्पति की हम स्वस्ति के लिए उपासना करते हैं। आदित्य हमारे लिए स्वस्तिकारक हों।

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये। देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः।। 5।।

आज यज्ञ के दिन हमारे आनन्द के लिए सब विद्वान् लोग और दिव्य पदार्थ कल्याणकर हों। सर्वत्र बसने-वाला अग्नि मंगलकारी हो। हमारे कल्याण के लिए, दुष्टों

को रुलाने वाले आप, पापरूप अपराध से हमारी रक्षा करें।।

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति। स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि।। 6।।

हे परमेश्वर ! सबके मित्र और श्रेष्ठ सज्जन हमारा कल्याण करें। शुभ धनादि-सम्पन्न मार्ग हमारे लिए कल्याणकारी हों। राजा और नेता ब्राह्मण हमारे लिए कल्याणकारी हों।

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव। पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि।। 7।।

हे ईश्वर ! कल्याण के मार्ग में आनन्द से हम विचरें, जैसे सूर्य और चन्द्र नियमित गति से बिना किसी उपद्रव के विचरते और सबको लाभ पहुंचाते हैं। दानशील, अहिंसक और ज्ञान-सम्पन्न के साथ हम मेल करें।

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतुज्ञाः। ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।। 8।।

जो आप विद्वानों में भी अत्यन्त पूजनीय और मनन

शील सत्यज्ञानी हैं, वे आप संन्यासी लोग विद्या के उपदेश हमें देवें और कल्याणकारी पदार्थों से हमारी रक्षा करें।

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः। उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये।।9।।

जिन विद्वानों के लिए, सबको निर्माण करने वाली पृथ्वी मीठे दुग्धादि पदार्थ देती है और अखण्डनीय मेघों से भरा हुआ अन्तरिक्ष-लोक सुन्दर जल देता है, अत्यन्त बल वाले यज्ञ द्वारा वृष्टि करने वाले, उन लोकों को उपद्रव न होने के लिए हमें प्राप्त कराइए।

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा, बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः। ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो, दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये।। 10।।

मनुष्यों के द्रष्टा, आलस्यरहित, लोगों के पूजनीय विद्वान् लोग, जो कि अमर पद को प्राप्त हो चुके हैं, सुन्दर प्रकाशमय रथों से युक्त हैं जिनकी बुद्धि को कोई दबा नहीं सकता, ऐसे पापरहित विद्वान् जो कि अन्तरिक्ष-लोक से

ऊंचे देश को ज्ञानादि द्वारा प्राप्त करते हैं, हमारे कल्याण के लिए हों।

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञायमयुरपरिहृता दधिरे दिवि क्षयम्। ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये।। 11।।

अपने तेज से अच्छी प्रकार विराजमान्, ज्ञानादि से वृद्ध जो विद्वान् लोग यज्ञ को प्राप्त होते हैं और जो सबसे अपीड़ित देवता लोग बड़े-बड़े स्थानों में निवास करते हैं, उन गुणों से अधिक भक्तों को हव्यान्न के साथ और अच्छी स्तुतियों के साथ कल्याण के लिए सेवन कराओ।

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन। को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये।। 12।।

जिस स्तुति का तुम सेवन करते हो, उस स्तुति को कौन बनाता है ? हे मननशील विद्वान् लोगो ! तुममें कौन यज्ञ को अलंकृत करता है ? जो यज्ञ हमारे पाप को हटाकर कल्याण के लिए हमारा पालन करता है, उसका विचार करो।

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः। त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ।। 13।।

जिसके कारण विद्वान् लोग बड़े-बड़े यज्ञों द्वारा सम्मान पाते हैं, वे भयरहित सुख को देवें और कल्याणकारी वैदिक-मार्ग बतावें।

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः। ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये।। 14।।

जो विद्वान् अच्छे ज्ञानवाले, सबके जानने वाले, स्थावर और जंगम लोक के स्वामी बनते हैं, आज कल्याण के लिए किए और न किए हुए पाप से पार करें।

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये।। 15।।

पाप के हटानेवाले, शक्तिशाली विद्वानों को संग्रामों में अपनी रक्षा के लिए बुलावें, और सर्वश्रेष्ठ कर्मवाले आस्तिक पुरुषों को बुलावें और अनादि लाभ तथा अनुपद्रव

के लिए अग्निविद्या, प्राणविद्या, सेवनीय जलविद्या, अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी की विद्या और वायुविद्या का हम सेवन करें।

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्। दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये।। 16।।

अच्छी प्रकार रक्षा करने वाली, लम्बी-चौड़ी उपद्रवरहित, अच्छा सुख देने वाली अच्छी प्रकार बनाई गई, सुन्दर यंत्रों से युक्त, दृढ़, विद्युत्-सम्बन्धी नौका अर्थात् विमान के ऊपर हम लोग सुख के लिए चढ़ें।

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहृतः। सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये।। 17।।

हे पूजनीय विद्वानो ! हमारी रक्षा के लिए आप उपदेश किया करें। पीड़ा होने वाली दुर्गति से, शत्रुता से रक्षा और सुख के लिए हम आपको बुलाया करें।

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः। आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये।। 18।।

हे विद्वानो ! रोगादि और लोभ-बुद्धि को पृथक् करो। पाप की इच्छा करने वाले शत्रु की दुष्ट बुद्धि को दूर करो, द्वेष करने वाले सबको हमसे पृथक् करो, हमारे लिए बहुत सुख दो।

अरिष्टःस मर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरत्ति विश्वानि दुरिता स्वस्तये।। 19।।

जिन पुरुषों को अच्छी नीतियों से, पापों का उल्लंघन करके सन्मार्ग में प्रवर्त्त करने की इच्छा होती है, वे सब पुरुष किसी से पीड़ित न होकर बढ़ते हैं, धर्मानुष्ठान के बाद पुत्र-पौत्रादिकों से भली भांति बढ़ते हैं।

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने। प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये।। 20।।

हे विद्वान् लोगो ! अन्न के लिए जिस रमणीय, गान-साधन वाष्पयानादि की रक्षा करते हो और धन के कारण संग्राम में जिस रथ की रक्षा करते हो, बड़े यंत्रालय

के विद्वानों से भी सेवनीय, उसी रथ पर हम कल्याण के लिए चढ़ें।

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यऽप्सु वृजने स्वर्वति। स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन।। 21।।

हमारे लिए राजमार्ग में कल्याण हो, जलरहित देश में जलाशय कल्याणकारी हों, सब आयुधों से युक्त शत्रुओं को दबाने वाली सेना में कल्याण हो, पुत्रों के उत्पन्न करनेवाले उत्पत्ति-स्थान में कल्याण हो, और गौ आदि के लिए कल्याण हो।

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति। सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपाः।। 22।।

जो समुद्र और पृथ्वी पर चलने वालों के लिए कल्याणकारिणी होती है, जो अति सुन्दर धन वाली है, जो यज्ञ को प्राप्त होती है, वह समृद्धि हमारे गृह की रक्षा करे। वही वन आदि देशों में रक्षिका हो।

इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा

अयक्ष्मा मा ब स्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि।। 23।।

हे ईश्वर ! अन्नादि इष्ट पदार्थों और बलादि के लिए हम आपका आश्रय लेते हैं। हे जीवो ! तुम वायु-सदृश पराक्रम वाले हो। सब जगत् का उत्पादक देव, यज्ञरूप श्रेष्ठ कर्म के लिए तुमको प्रेरित करे। उस यज्ञ द्वारा अपने ऐश्वर्य को बढ़ाओ। न मारने योग्य बछड़ों वाली, यक्ष्मा (तपेदिक) आदि रोगों से शून्य गौओं का तुम लोगों में जो चौर्यादि दुष्ट गुणों से युक्त हो, स्वामी न बने। अन्य पापी भी उनका रक्षक न बने, ऐसा यत्न करो, जिससे बहुत सी चिरकालपर्यन्त रहने वाली गौएं गोरक्षक के पास ठहरी रहें। परमात्मा से प्रार्थना करो कि यज्ञ करने वाले के पशुओं की हे ईश्वर ! तुम रक्षा करो।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे।। 24।।

हमें शुभ संकल्प प्राप्त हो। सर्वोत्तम दुःखनाशक विद्वान्

लोग सर्वदा वृद्धि के लिए ही हों। उन्हें प्रतिदिन प्रमादशून्य रक्षा करने वाले बनाओ।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम् देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे।। 25।।

सरलतया आचरण करने वाली, विद्वानों का कल्याण करने वाली अच्छी बुद्धि हमें प्राप्त हो, विद्वानों के मित्र-भाव को हम प्राप्त हों, जिससे कि वे हमारी अवस्था को दीर्घकाल जीने के लिए बनायें।

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।। 26।।

हम लोग ऐश्वर्य वाले, चर-अचर और जगत् के प्रति परमात्मा की, अपनी रक्षा के लिए स्तुति करते हैं, जिससे कि वह पुष्टिकर्ता ज्ञानादि धनों की वृद्धि करे। रक्षक और कार्यों का साधक परमात्मा हमारा कल्याण करे।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति

नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ।। 27 ।।

परमैश्वर्ययुक्त ईश्वर हमारा कल्याण करे। पुष्टिकर्ता सर्वज्ञ ईश्वर हमारा कल्याण करे। तीक्ष्ण तेजस्वी, दुःखहर्ता ईश्वर हमारा कल्याण करे।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ।। 28 ।।

विद्वान् लोगो ! हम कानों से शुभ ही सुनें, नेत्रों से अच्छी वस्तुओं को देखें, दृढ़ अंगों से परमात्मा की स्तुति करने वाले हम लोग शरीरों से अथवा मर्यादा के साथ विद्वानों के लिए कल्याणकारी जो आयु है, उसको अच्छी प्रकार प्राप्त हों।

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि ।। 29 ।।

हे प्रकाशस्वरूप परमात्मा, ज्ञान के लिए प्रशंसित, आप भक्ति-दान देने को प्राप्त होवें। सब पदार्थों के ग्रहण करनेवाले आप, यज्ञादि शुभ कर्मों में स्मरणादि द्वारा, हमारे हृदयों में स्थित होवें।

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने।। 30।।

हे पूजनीय ईश्वर ! आप छोटे-बड़े सब शुभ कर्मों के उपदेष्टा हैं। विद्वान् लोगों से आप विचारशील पुरुषों में उपास्य रूप से स्थापित किए जाते हैं।

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः। वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे।। 31।।

तीन—रजस्, तमस् और सत्त्वगुण तथा सात ग्रह, अथवा तीन-सात (इक्कीस) अर्थात् 5 महाभूत, 5 ज्ञानेन्द्रिय, 5 प्राण, 5 कर्मेन्द्रिय, 1 अन्तःकरण जो सब चराचरात्मक वस्तुओं का अभिमत फल देकर पोषण करते हुए यथोचित विद्यमान रहते हैं, उनके सम्बन्धी बलों को मेरे शरीर में आज, हे वाणी के पति परमेश्वर ! धारण करो।

(इति स्वस्तिवाचनम्)

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।। यजु० 42.2
यहाँ काम करते हुए ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करें।

अथ शान्तिकरणम्

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयो शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ।। 1।।

हे ईश्वर ! बिजली और अग्नि रक्षा-सामग्री के द्वारा हमें सुखकारक हों, बिजली और जल हमें सुखकारी हों, सूर्य और चन्द्रमा कल्याण के लिए रोगनाशक और भय-निवारक हों। बिजली और पवन पराक्रम के लिए सुखदायक हों।

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः। शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु।। 2।।

भगवन् ! हमारा ऐश्वर्य शान्तिदायक हो, हमारी प्रशंसा शान्तिदायक हो। हमारी बुद्धि शान्तिदायिका हो, सब प्रकार के धन शान्तिदायक हों। शासन शान्तिदायक हो। श्रेष्ठों का माननीय सत्य, न्यायकारी भगवान् शान्तिदायक हो।

शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु

स्वधाभिः। शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु।। 3।।

धारण करने वाले ईश्वर हमें शान्तिकारक हों। दिशाएं हमें बहुत अन्नों से शान्तिकारक हों। बहुत विस्तार वाले भूमि और सूर्य दोनों शान्तिकारक हों। मेघ अथवा पहाड़ शान्तिकारक हों। विद्वान जनों के सुन्दर बुलावे हमें शान्तिकारक हों।

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्। शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु। शं न इषिरो अभि वातु वातः।। 4।।

प्रकाशस्वरूप परमेश्वर हमारे लिए शान्तिकारक हों। दिन और रात हमारे लिए सुखकारक हों। सूर्य और चन्द्रमा शान्तिकारक हों, सत्यकर्मियों के शुभ कर्म हमारे लिए शान्तिकारक हों। पवन हमारे चारों ओर चले।

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु। शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः।। 5।।

कार्य के आरम्भ में सूर्य, भूमि और मध्यलोक

शान्तिदायक हों। औषधियां, अन्नादि और वन के पदार्थ हमको शांतिदायक हों, विजेता स्वस्तिकर हों।

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः। शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु।। 6।।

सूर्य हमें सुखदायक हो, जल सूर्य की किरणों के साथ सुखदायक हो। ज्ञानदाता आचार्य नियमों द्वारा हमें सुखदायक हो, परमेश्वर हमारी वाणियों द्वारा हमारी प्रार्थना सुनें।

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः। शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः।। 7।।

सौम्यस्वभाव ब्राह्मण हमें शान्तिदायक हो। परमेश्वर हमें शान्तिदायक हो। पत्थर सुखकर हों, यज्ञ सुखदायक हो। औषधियां हमें सुखदायक हों और वेदी सुखदायक हो।

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु। शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः।। 8।।

सूर्य हमें सुखदायक हो, चारों दिशाएं सुखदायक हों, पहाड़ सुखदायक हों, समुद्र सुखदायक हों और जल व प्राण सुखदायक हों।

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः। शं नो विष्णुः शमुः पूष नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः।। 9।।

वेद-विद्या और धरती हमें सुखदायक हों। विद्वान् लोग सुखदायक हों। सूर्य सुखदायक हो। भूमि सुखदायक हो। अन्तरिक्ष और जल सुखदायक हों और पवन सुखदायक हो।

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः। शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः।। 10।।

रक्षक प्रभु हमें सुखदायक हों। जगमगाती हुई प्रभातवेलाएं सुखदायक हों। बादल सुखदायक हों, क्षेत्रपति किसान सुखदायक हों।

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।

शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः।। 11।।

विद्वज्जन सुखदायक हों, वेद-विद्या सुखदायक हो। बलशाली और दानी सुखदायक हों। आकाश और पृथ्वी के पदार्थ हमें सुखदायक हों, जलसम्बन्धी पदार्थ हमें सुखदायक हों।

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः। शं नः ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरा हवेषु।। 12।।

सत्यवक्ता हमें सुखदायक हों। घोड़े और गौएं सुखदायक हों। बुद्धिमान् बड़े-बड़े काम करने वाले, हस्तकार्य में चतुर लोग हमें यज्ञों में सुखदायक हों।

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः। शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः।। 13।।

जगत्पाद, अजन्मा व्यापक भगवान् हमें शांतिदायक हो। न हारनेवाला सब मूल तत्त्वों का साधक हमें शांति-

दायक हो। सब को सींचनेवाला ईश्वर शांतिदायक हो। प्रजाओं को पार करनेवाला, विद्वानों का रक्षक परमेश्वर हमें शांतिदायक हो।

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे।। 14।।

परमेश्वर ! आप दो पांव वाले मनुष्य आदि के लिए और चौपाये गौ आदि पशुओं के लिए शांतिदायक हों।

शन्नो वातः पवताꣳ शन्नस्तपतु सूर्य्यः। शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु।। 15।।

परमेश्वर ! पवन सुखकारी हो। सूर्य हमको सुखकर रूप में तपावे। उत्तम गुण वाले बादल हमारे लिए सब ओर से वर्षा करें।

अहानि शं भवन्तु नः शंꣳ रात्रीः प्रतिधीयताम्। शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शन्न इन्द्रा-पूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः।। 16।।

परमात्मन् ! दिन और रात सुख के लिए हों। बिजली और प्रत्यक्ष अग्नि दोनों रक्षा-सामग्री हमें सुखकारक हों।

जल, बिजली और पृथ्वी अन्नों के लाभ हमें सुखकारी हों। सुखदायक बिजली और पृथ्वी, उत्तम धन के लिए रोगनाशक और भयनिवर्तक हों।

शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शं योरभिस्रवन्तु नः।। 17।।

शान्तिदात्री जगन्माता हमारे अभीष्ट की पूर्ति और भक्तिरस का पान कराने के लिए हमारे लिए शान्तिदायिनी हो। वह हमारे चारों ओर शान्ति की वर्षा करे और रोग-दोष एवं शोकादि को दूर कर दे।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।। 18।।

सूर्य आदि लोक सुखदायक हों। मध्यलोक सुखदायक हों। भूलोक सुखदायक हो। औषधियां सुखदायक हों। वृक्ष सुखदायक हों। दिव्य पदार्थ सुखदायक हों। ईश्वर, वेद-विद्या व जितेन्द्रियता सुखदायक हों। सब कुछ

सुखदायक हो। शान्ति भी सच्ची शान्ति हो। ऐसी शान्ति मुझको प्राप्त हो।। 18।।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।। 19।।

सबको देखने वाला, विद्वानों का हितकारी, प्रलय से पूर्व विद्यमान परब्रह्म है। हम सौ वर्ष तक कल्याण देखें, सौ वर्ष तक जीवें, सौ वर्ष तक हम सुनते रहें। सौ वर्ष तक शुभ वाणी बोलते रहें। सौ वर्ष तक स्वतन्त्रता से अदीन हो रहें। सौ वर्ष से अधिक भी हम ऐसा ही व्यवहार करते रहें।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिव सकंल्पमस्तु।। 20।।

हे परमात्मन्! जो जागते हुए पुरुष का दिव्यगुण वाला मन दूर चला जाता है और वही मन सोए हुए का उसी प्रकार चलता रहता है। जो दूर-दूर ले जाने वाला विषय-प्रकाशन इन्द्रियों का एक प्रकाशक है, वह मेरा मन धार्मिक विचार वाला हो।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।। 21 ।।

जिस मन द्वारा कर्म के जानने वाले धीर पुरुष यज्ञ अर्थात् धर्म-व्यवहार में कामों को करते हैं और जो प्राणियों के भीतर अद्भुत और पूजनीय है, वह मेरा मन शुभ विचार वाला हो।

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।। 22 ।।

जो मन ज्ञान का उत्पादक, स्मरणशक्ति और साधारण शक्ति का आधार है, जो जीती-जागती ज्योति प्राणियों के भीतर है, जिसके बिना कुछ भी काम नहीं किया जाता, वह मेरा मन शुभ विचार वाला हो।

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्, परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।। 23 ।।

प्रभो ! जिस अमर मन के द्वारा तीनों काल का सब वृत्तान्त सर्वथा जाना जाता है, जिसके द्वारा सात हवन करने वालों से पूरा किया हुआ पूजनीय कर्म फैलाया जाता है,

वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो।

यस्मिन्नृचः साम यजूᳬषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः। यस्मिंश्चित्तᳬ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। 24।।

परमात्मन्! जिस मन में चारों वेदों का ज्ञान इस प्रकार विद्यमान है जैसे रथ के पहिये में अरे अटके रहते हैं, जिनमें प्राणियों का सब विचार बना हुआ है, वह मेरा मन भलाई का ही विचार करनेवाला हो।

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। 25।।

प्रभो! जो मन मनुष्य को लगातार लिए फिरता है जैसे चतुर सारथि बागडोर से वेग वाले घोड़ों को। जो हृदय में ठहरा हुआ सबका चलाने वाला, बड़ा ही वेग वाला है, वह मेरा मन मंगल विचार युक्त हो।

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधोभ्यः।। 26।।

हे परमेश्वर! गौओं और मनुष्यों की रक्षा के लिए,

अन्न और सोम आदि ओषधियों की रक्षा के लिए हमें सामर्थ्य दो।

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ।। 27 ।।

हे भगवन्! हमें द्युलोक, मध्यलोक और पृथिवीलोक अभय करें, पश्चिम में अभय हो, पूर्व में अभय हो, उत्तर और दक्षिण में हमारे लिए अभय हो।

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ।। 28 ।।

अभय प्रभो ! हमें मित्र और अमित्र से और ज्ञात, अज्ञात से अभय हो, दिन और रात हमें निर्भयता प्राप्त हो। सब दिशाओं के निवासी प्राणी मेरे मित्र व हितकारी हों।

। इति शान्तिकरणम् ।

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत। कठ० उ० 3.14
उठो, जागो, श्रेष्ठ (आचार्यों) को पाकर ज्ञान प्राप्त करो।

सामान्य प्रकरण

1–आचमन-मन्त्र

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।। 1।। ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा।। 2।। ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा।। 3।।

हे भगवन्! यह सुखप्रद जल सबका आश्रयभूत है, यह कथन शुभ हो।। 1।।

हे अमर परब्रह्म ! तू जगत् को सर्वथा धारण करने वाला है।। 2।।

हे परमेश्वर ! सत्यकर्म, यश, सम्पत्ति और ऐश्वर्य मुझमें विराजमान हों।। 3।।

2–अंग-स्पर्श-मन्त्र

ओं वाङ्म आस्येऽस्तु।। 1।। (मुख) ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु।। 2।। (नाक) ओमूअक्ष्णोर्मेचक्षुरस्तु।। 3।। (आँखें) ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु।। 4।। (कान) ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु।।5।। (भुजाएं) ओं ऊर्वोर्म ओजोऽस्तु।।

6।। (जंघा) ओमू अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु।। 7।। (शरीर)

मेरे मुख में बोलने की शक्ति रहे।। 1।।

मेरे दोनों नथनों में श्वास-शक्ति रहे।। 2।।

मेरी दोनों आंखों में दृष्टि रहे।। 3।।

मेरे कानों में श्रवण-शक्ति रहे।। 4।।

मेरी भुजाओं में बल हो।। 5।।

मेरी जंघाओं में बल रहे।। 6।।

परमेश्वर ! मेरे अंग अशुभ लक्षण-रहित और पुष्ट हों ! ये सदा शरीर के साथ रहें।। 7।।

3–अग्न्याधान-मन्त्र

निम्नलिखित मन्त्र से अग्नि प्रदीप्त करें–

[विदेशी कपूर यथासम्भव न बरतें; सुनते हैं उसमें अपवित्र पदार्थों का योग होता है। अच्छा हो यदि समिधा को घृत लगाकर अग्नि को प्रदीप्त किया जाए।]

ओं भुर्भुवः स्वः।। 1।। ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवी देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नाद-

मन्नाद्यायादधे ।। 2 ।।

ईश्वर-कृपा से उस अग्नि को प्रदीप्त करता हुआ मैं भूमि, अन्तरिक्ष और द्युलोक को अपने अनुकूल बनाता हूं ।। 1 ।। **(यह बोलकर अग्नि को कुण्ड में रखे)** परमेश्वर सबका आधार, सबमें व्यापक सुखस्वरूप है। वह परमेश्वर बृहत्त्व के कारण आकाश के समान और फैलाव में पृथ्वी के समान है। हे भगवन् ! यह पृथ्वी ! जो देवताओं का यज्ञस्थान है, उसकी पीठ पर हव्य खानेहारे भौतिक अग्नि को, खाने योग्य अन्न की प्राप्ति के लिए मैं, स्थापित करता हूं ।। 2 ।।

अगले मन्त्र से अग्नि को खूब जलाएं–

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते स ꣳसृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ।। 3 ।।

हे विद्वान यजमान ! तू उत्तम रीति से चैतन्य को प्राप्त हो और प्रत्यक्ष जागरित हो। हे यजमान ! तू और यज्ञ, दोनों इष्ट अर्थात् वेदाध्ययन, आतिथ्य आदि और पूर्त अर्थात् प्याऊ, बगीचा, धर्मशाला आदि कर्म कर। हे सब विद्वान्

जनो ! आप इस उत्तम समाज में अधिकारानुसार बैठो।

4–समिधादान-मन्त्र

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा।। इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम।। 1।। ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा।। इदमग्नये इदन्न मम।। 2।। ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा।। इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम।। 3।। ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा। इदमग्नयेऽङ्गिरसे इदन्न मम।। 4।।

(आठ-आठ अंगुल लकड़ी की तीन समिधा घृत में भिगोकर पहले मन्त्र से पहली, दूसरे व तीसरे से दूसरी और चौथे मन्त्र से तीसरी समिधा कुण्ड में डालें।)

हे सब पदार्थों में विद्यमान् परमेश्वर ! यह मेरी आत्मा तेरे लिए ईंधन रूप है। इससे मुझमें तू प्रकाशित हो और यह अवश्य ही बढ़े। हमको तू पुत्रपौत्र, सेवक आदि प्रजा

से, गौ आदि पशुओं से, वेद-विद्या के तेज से, भोग्य-धान्य, घृत आदि अन्न से समृद्ध कर। यह सुन्दर आहुति है। यह ज्ञानरूप परमेश्वर के लिए है, मेरे लिए नहीं।

ईंधन से और घृत से व्यापनशील अग्नि को तुम सब पूजो और चेताओ। इसमें हवन-सामग्री भी यथाविधि डालो। यह सुन्दर आहुति है। यह परमेश्वर के लिए है। यह मेरे लिए नहीं।

(ऊपर का या दूसरा मन्त्र जो सारा नहीं पढ़ा जाता, पूर्ण पढ़ना चाहिए।)

अच्छे प्रकार प्रदीप्त संशोधक पदार्थों में विद्यमान अग्नि में तपाया हुआ घृत डालो। यह सुन्दर आहुति परमेश्वर के लिए है, मेरे लिए नहीं।

इस व्यापनशील अग्नि को ईंधन और घृत से प्रदीप्त करते हैं। यह जो संयोजक है यह बहुत प्रज्वलित हो। यह सुन्दर आहुति परमेश्वर के लिए है, मेरे लिए नहीं।

5–घृताहुति-मन्त्र

स्रुवा को अंगुष्ठ, मध्यमा और अनामिका से पकड़ छः माशे की

घृताहुति दें। जिन मन्त्रों के साथ (इदं न मम) यह प्रयोग है, उस प्रत्येक आहुति से स्रुवा के बचे घृत को जलपात्र में इकट्ठा करते जाएं और यज्ञ-समाप्ति पर मुख आदि अंगों पर मलें।

इस मन्त्र से पांच घृत की आहुति दें–

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा।। इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम।

(इसका अर्थ पृष्ठ 165-66 पर देखें)।

6–जलप्रसेचन (परिखा) मन्त्र

दाहिनी अंजलि में जल ले के इन मन्त्रों से वेदी के चारों ओर क्रम से 'पूर्व', 'पश्चिम', 'उत्तर' तथा 'दक्षिण' से आरम्भ कर, फिर सब ओर जल छिड़कें।

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व।। 1।। (पूर्व) ओम् अनुमतेऽनु-मन्यस्व।। 2।। (पश्चिम) ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व।। 3।। (उत्तर) ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु।। 4।।

हे अखण्ड परमेश्वर ! आप हमारे अन्दर यज्ञ,

स्वार्थत्याग और परोपकार-भावना को उत्पन्न करें।

हे हितकारी बुद्धिवाले ईश्वर ! आप हमें भी हितकारिणी मति दीजिए।

सब विद्याओं के भंडार जगदीश्वर ! आप प्रसन्न होकर हमें प्रसन्नता दो।

हे प्रकाशमय, सबके चलानेहार परमेश्वर ! इस यज्ञ या उत्तम कर्म को आगे बढ़ाओ और यज्ञ के रक्षक यजमान को ऐश्वर्य की सिद्धि के लिए आगे बढ़ाओ। अद्भुत स्वभाव, विद्याओं के आधार, बुद्धि को शुद्ध करनेहारे परमेश्वर, हमारी बुद्धि को शुद्ध करो। विद्या के स्वामी परमात्मन्, हमारी वाणी को मधुर करो।

7–आधारावाज्याहुति-मन्त्र

ओम् अग्नये स्वाहा इदमग्नये इदन्न मम।। 1।। (उत्तर) ओं सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदन्न मम।। 2।। (दक्षिण)

(इन मन्त्रों से घृताहुति दें–पहले से 'उत्तर' भाग में और दूसरे से 'दक्षिण' में एक-एक आहुति दें।

ये प्रभु के लिए आहुति हैं, मेरे लिए नहीं।। 1।।

सौम्यस्वभाव परमेश्वर के लिए यह सुन्दर आहुति है, मेरे लिए नहीं।। 2।।

8–आज्यभागाहुति-मन्त्र

इससे मध्य में घृताहुति देंवे–

ओम् प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदन्न मम।। 1।। ओम् इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय इदन्न मम।। 2।।

प्रजापालक ईश्वर के लिए यह आहुति है, मेरे लिए नहीं।

परम ऐश्वर्य वाले परमात्मा के लिए यह आहुति है, मेरे लिए नहीं।

दैनिक अग्निहोत्र

9–प्रातःकाल के मन्त्र

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।। 1।। ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।। 2।। ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।।3।। ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या। जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा।। 4।।

चराचर के आत्मा ! प्रकाशस्वरूप, सूर्यादि लोकों के प्रकाश की प्रसन्नता के लिए हम होम करते हैं।

जो सूर्य, परमेश्वर, हमको विद्याओं को देने वाला और हमसे उनका प्रचार कराने वाला है, उसी के अनुग्रह से हम होम करते हैं।

जो स्वयं प्रकाशमान और जगत् का प्रकाश करने वाला सूर्य अर्थात् परमेश्वर है, उसकी प्रसन्नता के लिए हम होम करते हैं।

जो परमेश्वर सूर्यादि लोकों में व्यापक, वायु और दिन के साथ परिपूर्ण, सबसे प्रीति करने वाला है, वह हमको विदित हो। उसके लिए हम होम करते हैं।

10–सायंकाल के मन्त्र

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा।। 1।। ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।। 2।। ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा।। 3।। ओम् सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा।। 4।।

तीसरे मन्त्र को मन में पढ़कर आहुति डालें।

अग्नि ज्योति है, जितना प्रकाश है, वह अग्नि का है। जो अग्नि परमेश्वर है, उसी की विभूति है।

अग्नि दीप्ति है, यह ज्योतिस्वरूप परमात्मा की ही दीप्ति है।

तीसरे का अर्थ पहले के समान समझो।। 3।।

प्रकाशमान सर्वप्रेरक प्रभु का सायंकाल के सूर्य के रूप में वर्तमान विभूति के साथ तथा ऐश्वर्ययुक्त रात्रि के साथ समान प्रीतियुक्त सेवन की जाती हुई आग, जो सामने है, उसमें प्रभु प्राप्त हों और हमारा यह यज्ञ सफल हो।

11–सायं-प्रातः के मन्त्र

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा। इदमग्नये प्राणाय इदं न मम।।1।। ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा। इदं वायवेऽपानाय इदन्न मम।। 2।।

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा। इदमादित्याय व्यानाय इदन्न मम।। 3।।

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा।

इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्य इदन्न मम।। 4।।

ओम् आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा।। 5।।

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।। 6।।

ओं विश्वानि देव सवितर् दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव स्वाहा।। 7।।

ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा।। 8।।

परमेश्वर सर्वाधार है, उत्तम प्रभाव और श्वास की स्वस्थता के लिए यह सुन्दर आहुति है। यह प्राणवायु के लिए है, मेरे लिए नहीं।

परमेश्वर सर्वव्यापी है। पवन के प्रभाव के लिए और प्रश्वास की स्वस्थता के लिए यह सुन्दर आहुति है। यह

अपानवायु के लिए है, मेरे लिए नहीं।

परमेश्वर सुखस्वरूप है, सूर्य के उत्तम तेज और सब शरीर में घूमने वाली वायु की स्वस्थता के लिए यह सुन्दर आहुति है। यह सूर्य और व्यान के लिए है, मेरे लिए नहीं।

परमेश्वर सर्वाधार, सर्वव्यापी और सुखस्वरूप है। अग्नि, वायु और सूर्य के उक्त प्रभाव के लिए और प्राण, अपान, व्यान के लिए यह सुन्दर आहुति है, मेरे लिए नहीं है।

सर्वरक्षक-परमेश्वर, सर्वव्यापी, ज्योतिस्वरूप, जगत् का बीज, अमर, सब से बड़ा, सर्वाधार, सर्वव्यापक और सुखस्वरूप है।।

जिस मेधा-बुद्धि का विद्वान् जन और माननीय रक्षक महात्मा लोग आश्रय लेते हैं, उस मेधा बुद्धि से हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर ! मुझको आप बुद्धिमान् करो।

(सातवें और आठवें मन्त्र का अर्थ 'ईश्वर-स्तुति-प्रार्थनोपासना' में देखिए।)

इस क्रिया के पश्चात् यदि घी और सामग्री बच रहे तो गायत्री-मंत्र से आहुतियां दें।

12–पूर्णाहुति-मन्त्र

इस मन्त्र से तीन बार स्रुवा को घृत से भरकर आहुति दें।

ओं सर्वं वै पूर्णꣳस्वाहा।

शेष सामान्य प्रकरण

विशेष अथवा बड़ा अग्निहोत्र करना हो, तो आज्यभागाहुतियों (ओम् इन्द्राय स्वाहा) के पश्चात् निम्न मन्त्रों से होम करें।

1–महाव्याहृति-मन्त्र

ओं भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्न मम।। 1।।
ओं भुवर्वायवे स्वाहा। इदं वायवे इदन्न मम।। 2।।
ओं स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय इदन्न मम।। 3।।

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा। इदमग्निवाय्वा-दित्येभ्य इदन्न मम।। 4।।

अर्थ—सर्वाधार अग्नि के लिए, दुःखनाशक, वायु समान व्यापक के लिए, सुखरूप, प्रकाशस्वरूप के लिए, सच्चे हृदय से मैं आहुति देता हूं। प्रभो ! आप स्वीकार करें।

2–स्विष्टकृद्-आहुति-मन्त्र

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत् स्विष्टकृद्विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा।। इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्न मम।।

अर्थ—मैं जो कुछ इस कर्म के सम्बन्ध में विधि से अधिक कर चुका हूं, या इसमें न्यून कर बैठा हूं, उसका ज्ञाता, यज्ञ का पूरक भौतिक और आध्यात्मिक अग्नि मेरे यज्ञ को अच्छी प्रकार किया हुआ करें। अग्नि के लिए, जो यज्ञ को ठीक बनाने वाला, आहुति को ठीक करने वाला, प्रायश्चित्त और सब कामनाओं को सफल करने वाला है,

यह आहुति देता हूं।

हे अग्ने ! हमारी सारी कामनाओं को परिपूर्ण करो। मेरी वाणी सत्य हो। यह स्विष्टकृत् अग्नि के लिए समर्पण कर चुका हूं, इस पर मेरा स्वत्व नहीं।

3–प्राजापत्याहुति-मन्त्र

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदन्न मम।।

(यह मन्त्र भी मन ही में पढ़ना चाहिए)

अर्थ—यह आहुति प्रजापति परमात्मा के लिए है, मेरे लिए नहीं।

4–आज्याहुति-मन्त्र

प्रधान होम-सम्बन्धी

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा।। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम।। 1।।

अर्थ—हे सर्वाधार, दुःखनाशक, सुखरूप, प्रकाशस्वरूप भगवन् ! आप हमारे जीवनों को पवित्र करते तथा बढ़ाते हो। हमें बल और अन्न प्रदान करो। राक्षसों को दूर

भगाओ। मेरी यह वाणी सत्य हो। यह हवि, पवित्र करने वाले प्रभु के लिए है, मेरे लिए नहीं।

ओं भूर्भुवः स्वः अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयं स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम।। 2।।

अर्थ—जो अग्नि सबको देखने वाला, पवित्र करने वाला, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और आर्य वर्ण से बाहर भी सबको धार्मिक कार्यों से प्रमुख होकर सहायता करने वाला, अत्यन्त बलवान् है, उसे हम सब धर्म-कर्म की सफलता के लिए प्राप्त होते हैं।

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा।। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम।। 3।।

अर्थ—हे सर्वाधार, दुःखापहारक, प्रकाशमान प्रभो ! आप अच्छे कर्मों के अधिष्ठाता हैं। आप हमें तेजपूर्ण ऐश्वर्य और पुष्टि धारण कराते हुए पवित्र करें।

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा

जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा।। इदं प्रजापतये इदन्न मम।। 4।।

इसका अर्थ 'ईश्वर-स्तुति-प्रार्थनोपासना' मन्त्र में देखें।। 4।।

5–अष्टाज्याहुति-मन्त्र

ओं त्वन्नोऽग्ने वरुणस्य विद्वान्, देवस्य हेळोऽवयासिसीष्टाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा।। इदमग्नीवरुणाभ्याम् इदन्न मम।। 1।।

हे अग्ने ! सुखस्वरूप ! परमात्मा ! आप कर्मों के फलदाता, क्रोध को जानने वाले हैं। आप उस क्रोध को दूर करो, यजनशील तथा यज्ञीय भागों का वहन करने वाले आप अत्यन्त दीप्त होकर हमारे सम्पूर्ण पापों को दूर करो।

ओं स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा।। इदमग्नीवरुणाभ्याम् इदन्न मम।। 2।।

अर्थ—हे अग्ने ! परमात्मन ! हमारे सदा से रक्षक आप आज के प्रातःकाल के यज्ञादि की सिद्धि के लिए समीपवर्ती

हों। हमें श्रेष्ठ उपदेश दीजिए और इस प्रकार हमारे सुखदायक यज्ञीय भाग को प्राप्त कीजिए।

ओम् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय। त्वामवस्यु-राचके स्वाहा।। इदं वरुणाय इदन्न मम।। 3।।

हे वरुण ! तुम आज मेरी इस प्रार्थना को सुनो और मुझे सुखी करो। रक्षार्थ मैं तुम्हारी स्तुति करता हूं।

ओं तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा।। इदं वरुणाय इदन्न मम।। 4।।

हे जगत्प्रभो ! हवि आदि देकर जिस आयु की, यजमान लोग तुम्हारा सत्कार करते हुए, आशा करते हैं, उस ही प्रसिद्ध सौ वर्ष की आयु को मैं भी तुमसे मांगता हूं। हे महाराज ! उस आयु में से कुछ भी कम न कीजिए।

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशाः वितताः महान्तः। तेभिर्नो ऽद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा।। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः इदन्न मम।। 5।।

हे वरुण ! यज्ञ के जो सैकड़ों और सहस्रों बड़े-बड़े विघ्न हैं उनसे आप और विद्वान् लोग हमको दूर रखें।

ओम् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयासि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳस्वाहा।। इदमग्नये अयसे इदन्न मम।। 6।।

हे कल्याणकारक अग्ने ! तुम सब जगह व्यापक और कुत्सित कर्म करने वालों को पवित्र करने वाले हो। हे अग्ने ! तुम हमारे यज्ञीय भागों को देवताओं के लिए वरण करते हो, हमको सुखकारक औषधि दो।

ओम् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मद्वाधमं वि मध्यमं श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा।। इदं वरुणायाऽऽदित्यायादितये च इदन्न मम।। 7।।

हे वरुण ! आप हमारे उत्तम, मध्यम और निष्कृष्ट बन्धन को ढीला कीजिए और फिर हम लोग आपके शासन में पाप-कर्मों से अलग रहकर मुक्ति-सुख के लिए यत्न करते रहें।

ओं भवतन्नः समनसो सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञꣳहिꣳ

सिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा। इदं जातवेदोभ्याम् इदन्न मम।। 8।।

हे परमात्मन् ! आप हमारे सहायक तथा हमारी अनिष्ट-चिन्ता से रहित हूजिए। आपकी कृपा से हमारे यज्ञ तथा यज्ञपति को कभी पीड़ा न पहुंचे और आप हमारे लिए कल्याणकारक होइये।

6–प्रतिज्ञाहुति-मन्त्र

बृहद् हवन में शान्तिपाठ से पहले निम्नलिखित मन्त्रों से भी आहुतियां दी जा सकती हैं–

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयम्। तेनर्ध्यासमिदमहम् अनृतात्सत्यमुपैमि स्वाहा।। इदमग्नये इदन्न मम।। 1।।

7–पूर्णाहुति-मन्त्र

ओं पूर्णा दर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत। वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जꣳ शतक्रतो स्वाहा।। 1।।

ओं पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते स्वाहा।। 2।।

ओं सर्वं वै पूर्णꣳस्वाहा।। 3।।

इसको तीन बार पढ़कर तीन आहुतियां दें।

8–शेष घृत छोड़ने की मन्त्र

ओं वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्र-धारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः।। 1।।

9–प्रार्थना-मन्त्र

ओं तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि। बलमसि बलं मयि धेहि। ओजोऽस्योजो मयि धेहि। मन्युरसि मन्युं मयि धेहि। सहोऽसि सहो मयि धेहि।। 1।। ओं मयि मेधां मयि प्रजां मय्यग्निस्तेजो दधातु।। 2।। मयि मेधां मयि प्रजां मयीन्द्र इन्द्रियं दधातु।। 3।। मयि मेधां मयि प्रजां मयि सूर्यो भ्राजो दधातु।। 4।। ओं यत्ते अग्ने तेजस्तेनाहं तेजस्वी भूयासम्।। 5।। ओं यत्ते अग्ने वर्चस् तेनाहं वर्चस्वी भूयासम्। यत्ते अग्ने हरस्तेनाहं हरस्वी भूयासम्।। 6।।

10–हविशेष-घृत-मर्दन-मन्त्र

ओं तनूपा अग्नेऽसि तन्वं मे पाहि।। 1।।
ओं आयुर्दा अग्नेऽस्यायुर्मे देहि।। 2।।
ओं वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि।। 3।।
ओम् अग्ने यन्मे तन्वा ऊनं तन्म आपृण।। 4।।
ओं मेधां मे देवः सविता आदधातु।। 5।।
ओं मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु।। 6।।
ओं मेधां मे अश्विनौ देवावाधत्तां पुस्करस्रजौ।। 7।।
औं शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

यज्ञ-प्रार्थना

पूजनीय प्रभो ! हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल-कपट को, मानसिक बल दीजिए।।
वेद की गाएं ऋचाएं, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोकसागर से तरें।।
अश्वमेधादिक रचाएं, यज्ञ पर-उपकार को।
धर्म-मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को।।

नित्य श्रद्धा-भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें।
रोग-पीड़ित विश्व के सन्ताप सब हरते रहें।।
भावना मिट जाए मन से पाप-अत्याचार की।
कामनाएं पूर्ण होवें यज्ञ से नर-नारि की।।
लाभकारी हो हवन हर जीवधारी के लिए।
वायु जल सर्वत्र हों शुभ गन्ध को धारण किए।।
स्वार्थ-भाव मिटे हमारा प्रेम-पथ विस्तार हो।
'इदन्न मम' का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो।।
हाथ जोड़ झुकाए मस्तक वन्दना हम कर रहे।
नाथ करुणारूप करुणा आपकी सब पर रहे।।

पितृ-यज्ञ

पितृ-यज्ञ को 'श्राद्ध' और 'तर्पण' भी कहते हैं। श्राद्ध शब्द 'श्रत्' से बना है, जो सत्य का वाचक है। जिस काम से सत्य का ग्रहण किया जाए वह 'श्रद्धा', और श्रद्धा से जो सेवा की जाए वह 'श्राद्ध' कहलाता है। जिस कर्म से

माता-पितादि जीवित पितरों को तृप्त अर्थात् सुखयुक्त किया जाए वह 'तर्पण' है।

तर्पण, श्राद्ध, विद्यमान प्रत्यक्ष पितरों का ही हो सकता है, मृतकों का नहीं; क्योंकि मिलाप हुए बिना सेवा नहीं हो सकती। मिलाप जीवितों का हो सकता है, मृतकों का नहीं। अतएव 'पितृ' शब्द से जीवित माता-पितादि बड़ों का अर्थ ग्रहण किया जाता है।

ओम् ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम्। स्वधाःस्थ तर्पयत मे पितृन्।।

पितृ-सेवा-प्रमाण

अर्थ—हे ईश्वर परमात्मन्! (ऊर्जं) बल-पराक्रम को (वहन्तीः) देने वाले (अमृतं) उत्तम रसयुक्त (घृतं) घी, (पयः) दूध, (कीलालं) पकवान, (परिस्रुतम्) रस चूते पके फल, (मे) मेरे, (पितृन्) पितरों को, (स्वधाः स्थ) प्राप्त कराके, (तर्पयत) तृप्त करते रहो जिससे वे सदा प्रसन्न होकर मुझको सत्योपदेश सुनाते रहें।

1—पितर शब्द से पिता, माता, पितामह, मातामह,

आचार्य, विद्वान् तथा ज्ञान में वृद्ध माननीय पुरुषों का ग्रहण होता है।

2—एक 'महापितृ-यज्ञ' भी होता है, जिसमें नीचे लिखे आठ प्रकार के पितरों की सेवा की जाती है—

(1) सोमसदः—अर्थात् ब्रह्मविद्या के वेत्ता।

(2) अग्निष्वात्ताः—कला-कौशल-ज्ञान वाले।

(3) बर्हिषदः—विद्या और व्यवहार के वेत्ता।

(4) सोमपाः—वैद्यराज।

(5) हविर्भुजः—हवन-विद्या के वेत्ता।

(6) आज्यपाः—पशु-विद्या के वेत्ता।

(7) सुकालिनः—ब्रह्म-विद्या के वेत्ता।

(8) यमराजाः—अर्थात् न्याय की व्यवस्था बांधने वाले, पक्षपात को छोड़कर न्याय करने वाले, शुद्धाचरण रखने वाले, राज-सम्बन्धी अधिकारी पुरुष।

।। इति पितृ-यज्ञः ।।

भूत-यज्ञ

1. 'भूत-यज्ञ' का नाम 'बलिवैश्वदेव-यज्ञ' भी है, अर्थात् विश्वदेव जो परमेश्वर के बनाए अन्य प्राणी हैं, उनके निमित्त बलि देने का यज्ञ।

2. इसमें छः जीवों, अर्थात्—

(1) कुत्ते (2) पतित (3) भंगी आदि चांडाल, (4) कुष्ठी आदि रोगी, (5) कौवे (6) चिऊंटी आदि कृमि-कीट के लिए लवणान्न, जैसे दाल, भात, रोटी आदि की छः बलि दी जाती हैं।

3. बलिवैश्वदेव-यज्ञ में प्रमाण—

अहरहर्बलिमित्ते हरन्तोऽश्वायेव तिष्ठते घासमग्ने।
रायस्पोषेण समिषा मदन्तो मा ते अग्ने प्रतिवेशा रिषाम।।

अर्थ—हे अग्ने परमेश्वर ! जिस प्रकार शुभ इच्छा से हम लोग घोड़े के आगे खाने योग्य घास धरते हैं, उसी प्रकार शुभ इच्छा से आपकी आज्ञानुसार नित्यप्रति बलिवैश्वदेव-कर्म को प्राप्त होते हुए राजलक्ष्मी और घी, दूध आदि पुष्टिकर

पदार्थों से हम आनन्दित रहें। हे परम गुरो ! अग्ने परमेश्वर ! हम लोग आपके विरुद्ध कभी न चलें और न अन्याय से किसी प्राणी को पीड़ित करें, किन्तु सबको अपना मित्र समझकर उनका हित करते रहें।

4. पूर्वोक्त छः प्राणियों के लिए निम्नलिखित प्रकार से भूमि पर बलि धरें—

1. श्वभ्यो नमः। 2. पतितेभ्यो नमः। 3. श्वपचेभ्यो नमः। 4. पापरोगिभ्यो नमः। 5. वायसेभ्यो नमः। 6. कृमिभ्यो नमः।

5. भोजन बनाने पर घृत और मिष्टान्न-मिश्रित भात, यदि भात न बना हो तो खारा और लवणान्न को छोड़कर जो कुछ ग्रास के समान हो, आगे लिखे दस मन्त्रों से अग्नि में डालें जो चूल्हे से निकालकर अलग रखी हो।

ओम् अग्नये स्वाहा।। 1।। ओम् सोमाय स्वाहा।। 2।। ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा।। 3।। ओम्विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा।। 4।। ओं धन्वन्तरये स्वाहा।। 5।। ओं कुह्वै स्वाहा।। 6।। ओम् अनुमत्यै स्वाहा।। 7।। ओं

प्रजापतये स्वाहा।। 8।। ओं द्यावापृथिवीभ्याᳬ स्वाहा।। 9।। ओं स्विष्टकृते स्वाहा।। 10।।

अग्नि के लिए आहुति देते हैं।

शान्तिस्वरूप ईश्वर के निमित्त आहुति देते हैं।

अग्नि भगवान् जो जीवन का हेतु और दुःख विनाशक है उसके निमित्त आहुति देते हैं।

विश्वपति और जगत्-प्रकाशक ईश्वर के निमित्त आहुति देते हैं।

रोगनाशक के लिए आहुति देते हैं।

अमावसी यज्ञपति के निमित्त आहुति देते हैं।

ईश्वर के चित्स्वरूप के निमित्त आहुति देते हैं।

जगत् के स्वामी के निमित्त आहुति देते हैं।

सूर्यादि प्रकाशमान और पृथ्वी आदि प्रकाशरहित लोकों के साथ जो ईश्वर सदा वर्तमान होकर उनको धारण कर रहा है, उसके निमित्त आहुति देते हैं।

इष्ट सुख के दाता ईश्वर के निमित्त आहुति देते हैं।

6. तत्पश्चात् निम्नलिखित सोलह मन्त्रों से सोलह

दिशाओं आदि के लिए बलि पत्तल पर अथवा थालों में धरें। यदि बलि धरते समय कोई अतिथि आ जाए तो उसी को दे दें।

बलि के लिये सोलह मन्त्र

ओं सानुगायेन्द्राय नमः ।। 1 ।। (पूर्व) ओं सानुगाय यमाम नमः ।। 2 ।। (दक्षिण) ओं सानुगाय वरुणाय नमः ।। 3 ।। (पश्चिम) ओं सानुगाय सोमाय नमः ।। 4 ।। (उत्तर) ओं मरुद्भ्यो नमः ।। 5 ।। (द्वार) ओं अद्भ्यो नमः ।। 6 ।। (जल) ओं वनस्पतिभ्यो नमः ।। 7 ।। (मूसल-ऊखल) ओं श्रियै नमः ।। 8 ।। (ईशान) ओं भद्रकाल्यै नमः ।। 9 ।। (नैर्ऋत्य) ओं ब्रह्मपतये नमः ।। 10 ।। (मध्य) ओं वास्तुपतये नमः ।। 11 ।। (मध्य) ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ।। 12 ।। ओं दिवाचरेभ्यो भूतेभ्यो नमः ।। 13 ।। ओं नक्तञ्चारिभ्यो भूतेभ्यो नमः ।। 14 ।। ओं सर्वात्मभूतये नमः ।। 15 ।। (पीछे) ओं पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः ।। 16 ।।

इन्द्र, ईश्वर के अनुयायी ऐश्वर्ययुक्त पुरुषों को नमस्कार हो।

यम, ईश्वर के अनुयायी सांसारिक न्यायधीशों को नमस्कार हो।

ईश्वर-भक्तों को नमस्कार हो।

पुण्यात्माओं को नमस्कार हो।

प्राणपति ईश्वर को नमस्कार हो।

सर्वव्यापक प्रभु को नमस्कार हो।

वनस्पतियों के स्वामी को नमस्कार हो।

पूजनीय ऐश्वर्ययुक्त को नमस्कार हो।

कल्याणकारक शक्ति को नमस्कार हो।

वेद के स्वामी प्रभु को नमस्कार हो।

ईश्वर को नमस्कार हो।

विश्वपति और प्रकाशरूप ईश्वर को नमस्कार हो।

दिन में विचरने वाले प्राणियों का सत्कार हो।

रात्रि में विचरने वाले प्राणियों का सत्कार हो।

सर्वव्यापक को नमस्कार हो।

अतिथि-यज्ञ

'अतिथि-यज्ञ' को ही 'नृयज्ञ' कहते हैं। जो विद्वान्, परोपकारी, जितेन्द्रिय, सत्यवादी, छलकपटरहित, धार्मिक पुरुष देशाटन करता हुआ अकस्मात् घर में आ जाए, वह 'अतिथि' कहलाता है। ऐसे अतिथि का आदर-सत्कार करके उसके सत्यउपदेश ग्रहण करने को 'अतिथि-यज्ञ' कहते हैं।

प्रमाण

ओ तद्यस्यैवं विद्वान् व्रात्योऽतिथिगृहानागच्छेत् ।। 1 ।।
ओं स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद्, व्रात्य ! क्वावात्सीर्व्रात्योदकं, व्रात्य ! तर्पयन्तु, व्रात्य ! यथा ते प्रियं तथास्तु, व्रात्य ! यथा ते वशस्तथास्तु, व्रात्य ! यथा ते निकामस्तथास्त्विति ।। 2 ।।

अर्थ—जब विद्वान् घर में आ जाए, तब गृहस्थी स्वयं उठकर सम्मानपूर्वक उससे मिले। उत्तम आसन पर बिठाकर पूछे—हे व्रात्य उत्तमपुरुष ! आपका निवास-स्थान कहां है ? जल लीजिए, हाथ मुंह धोइए। हम लोग प्रेम-भाव से आपको तृप्त करेंगे। जो पदार्थ आपको प्रिय हों, वही हम उपस्थित करेंगे। आपकी इच्छा को पूर्ण करेंगे। जैसी आपकी कामना हो वैसा ही होगा।

प्यारे प्रभु से मिलाप

प्रातः और सायं सन्ध्या व हवन के पश्चात् प्रत्येक नर-नारी को अपने भक्ति-भाजक परमेश्वर से मिलाप करना चाहिए। उस समय उदार हृदय से उस महाप्रभु से प्रार्थना करें, जो आपके रोम-रोम में रम रहा है। जैसे पुत्र पिता से अपने मन की प्रत्येक कामना प्रकट कर देता है, वैसे आप भी उस पिता को साक्षात् करके, उससे अपनी प्रत्येक शुभ इच्छा प्रकट करो, जो कुछ मांगना है, उससे मांगो। वह आपकी प्रत्येक शुभ इच्छा पूरी करेगा। सच्ची श्रद्धा और विश्वासयुक्त प्रार्थना से हृदय में शक्ति की धारा और आत्मा में आनन्द की वृष्टि होगी और थोड़े काल के अभ्यास से ही आपको अनुभव होगा कि आपके जीवन में प्रतिदिन कितना परिवर्तन हो रहा है। पाठकों की सुगमता के लिए दो-चार प्रार्थनाएं आगे लिखी जाती हैं। अपने पुरुषार्थ के अनन्तर परमदेव परमात्मा से सहायता की इच्छा करना 'प्रार्थना' है। वास्तव में प्रार्थना वेद-मंत्रों द्वारा ही करनी

चाहिए। अपने शब्दों द्वारा की हुई प्रार्थना में उतना बल कदापि नहीं आ सकता। परन्तु वेद-मन्त्रों का रटना मात्र ही पर्याप्त नहीं। प्रत्येक शब्द में जो उसका अर्थ है, उस शब्द के साथ ही उस अर्थ का ध्यान करना चाहिए। इसलिए यहां कुछ मन्त्र व कुछ श्लोक देकर उनके भावार्थ से पूर्ण प्रार्थनाएं दी जाती हैं।

प्रार्थना–1

ओं स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणम् अस्नाविरꣳशुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।। 1।। न तत्र चक्षुर्गच्छति, न वाग्गच्छति नो मनः।। 2।। यस्यामतं तस्य मतं मतं यस्य न वेदः सः। अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम्।। 3।।

त्वं हि नः पिता वसो ! त्वं माता शतक्रतो ! बभूविथ। अथा ते सुम्नमीमहे।। 4।।

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।। 5।।

भगवन् ! आप हमारे परम पिता हैं, सर्वथा सुख के देने

वाले हैं। दुष्टों के अत्याचार से बचाकर हमको स्थिर करने वाला सुख प्रदान कीजिए। हमको उत्तम बुद्धि और पराक्रम प्रदान कीजिए। हम जो कुछ मांगेंगे, आप ही से मागेंगे, क्योंकि सब सुखों के दाता आप ही हैं। हमको केवल मात्र आपका ही आश्रय है।

हे दयामय ! आप ऐसी कृपा करें कि हम आपको छोड़कर और किसी के द्वार पर न जाएं। आपका स्वभाव है कि आप अपने शरणागत को नहीं त्यागते, वरन् सदैव रक्षा करते हैं। हमें भी पूर्ण निश्चय है आप हमारी प्रार्थना अवश्य स्वीकार करेंगे।

भगवन् ! आप ऐसे कृपालु और दयालु हैं कि जो पुरुष तन, मन और धन से आपकी भक्ति करता है, आप उसको न केवल इस लोक में निहाल करते हैं, वरन् परलोक में भी सुखी करके प्रसन्न करते हैं। आप अपने भक्त को ब्रह्मचर्य में स्थिर करके उसको ज्ञान, विज्ञान आदि धन से पूर्ण करके, परलोक की सिद्धि प्रदान करते हैं।

प्रभो ! आप ऐसी कृपा करें कि आप हमारे हृदय से

कभी न बिसरें जिससे हम निष्पाप होकर सदा आनन्दित रहें।

भगवन् ! जो आपको आत्मसमर्पण करते हैं, वे सदा ही निष्पाप होकर आपके प्रदान किए हुए पूर्ण परमानन्द को चिरकाल तक भोगते हैं।

पिता ! आपकी कृपा से हमारी वाणी सबको पवित्र करने वाली और वेदोक्त कर्मों को प्रकट करने वाली हो, इसके लिए हम वेदोक्त कर्म करते हुए आपकी स्तुति, प्रार्थना और उपासना करते रहें। उत्तम कर्मों में रुचि दिखानेवाले और उनका फल देने वाले केवल मात्र आप ही हैं।

हे सर्वपालक, सर्वपोषक ! जड़ और चेतन जगत् के रचनेवाले पिता ! जिस प्रकार आप अपने उत्तम ज्ञान से हमारी बुद्धि को निर्मल बनाते हैं, उसी प्रकार हमारे शरीर की रक्षा कीजिए और इसको सदा रोगरहित रखिए, जिससे आपका उत्तम ज्ञान हमारे मन, वाणी और शरीर द्वारा प्रकट होता रहे। आप निष्काम हैं, हमें भी निष्काम बनाइए। हम

वैदिक कर्मों को इकट्ठे मिलकर प्रीतिपूर्वक निष्काम होकर करते रहें। हममें वेदपाठी और तेजस्वी ब्राह्मण हों, जो हिंसक दुष्ट स्वभाव वाले असुरों से हमारी रक्षा करते रहें, जिससे हम सब प्रकार से निर्भय होकर आपकी सेवा में तत्पर हों। प्यारे पिता ! आपकी कृपा से हम सब सुखी रहें, सब भद्र देखें। कल्याणकारी पदार्थ देखें। हममें से एक भी दुःख का भागी न बने। .

प्रार्थना–2

ओं तदेजति तन्नैजति, तद् दूरे तद्वन्तिके। तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य ब्राह्यतः।। 1।।

दिव्यो ह्यमूर्तः पुरुषः स बाह्याभ्यन्तरो ह्यजः। अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरात्परतः परः।। 2।।

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन् महती विनष्टिः। भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति।। 3।। भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः। क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।। 4।। प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु। प्रियं सर्वस्य पश्यत

उत शूद्र उतार्ये।। 5।।

भगवन् ! आप अत्यन्त कल्याणयुक्त गुणों से परिपूर्ण हैं, आप इस सारे जगत् के चक्र को चला रहे हैं और स्वयं एकरस सर्वत्र परिपूर्ण हैं, दूर से दूर और निकट से निकट हैं। आपकी शरण त्यागकर जीव सारे जगत् में भटकते हैं, कहीं विश्राम नहीं मिलता। जो आपको भूले हुए हैं, उनसे आप अत्यन्त दूर हैं, पर जो आपकी शरण में आन पड़े हैं, आप उनके सदा निकट, हृदय के भीतर ही विराजमान हैं, वे अपने हृदय के द्वार खोलकर आत्मा द्वारा आपके दर्शन करते हैं। आप सबके भीतर तथा बाहर हैं और सबसे न्यारे हैं।

ओं सह नाववतु, सह नौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु, मा विद्विषावहै।। 6।।

एक चींटी से लेकर बड़े हाथी तक, सब तारागण, ग्रह, उपग्रह, चन्द्र, सूर्य, धूम्रकेतु जो आकाश में चक्कर काट रहे हैं; सब जीव-जन्तु, पशु-पक्षी, मनुष्य तथा नाना प्रकार के फल-फूल और वनस्पति आपके ही उत्पन्न किए हुए हैं।

जल, पवन और स्थल सब आपकी महती महिमा के ही शब्द गा रहे हैं।

स्वामिन् ! आपके बिना हमारा और कौन है। विपत्-काल में आप ही आश्रय हैं, आप ही शान्ति-दाता हैं। नमस्कार हो उस अन्तर्यामी अनाथों के नाथ को, जो क्लेशों को दूर करता है और अपनी परम शक्ति से भोजन देता है। वन्दना और प्रणाम हो उस नित्य शुद्धिदाता को, जिसकी दया से परम आनन्द प्राप्त होता है। वन्दना हो रोगविनाशक स्वामी और सर्वान्तर्यामी महान् पिता को, जिसका राज्य अटल है, जिसकी शक्ति अटल है, जिसकी सामर्थ्य अटल है।

त्रिलोकी के नाथ ! हम आपके पांव पड़कर वरदान मांगते हैं कि आप कृपा करके हमें शुद्ध मति दीजिए, सुबुद्धि अर्पण कीजिए और मानसिक दृढ़ता दीजिए। जो दुःख, जो कष्ट हमको पहुंचे उनसे व्याकुल होकर शुद्ध और पवित्र मार्ग को न भूल जाएं। चाहे जगत् हमारी दुर्दशा भी करे, चाहे हमारा नाम भी घटे, परन्तु हमारी सदा यही अभिलाषा

रहे कि हम आपकी आज्ञा को पाल सन्मार्ग के यात्री हों, सत्य ही बरतें, तब ही हम आपकी कृपा सम्पादन करने के योग्य होंगे। हे रोगविनाशक स्वामिन् ! सदैव हमारी श्रद्धा आपकी भक्ति में रहे, हमारी विद्या बढ़े, हमारा पढ़ा-पढ़ाया साफ हो।

ओं शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

प्रार्थना–3

ओं सहस्रशीर्षा पुरुषः, सहस्राक्षः सहस्रपात् स भूमिꣳ सर्वतः स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।। 1।।

यतो वाचो निवर्तन्ते, अप्राप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न विभेति कदाचन।। 2।।

अनाद्यनन्तं सलिलस्य मध्ये, विश्वस्य स्रष्टारमनेकरूपम्। विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं, ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः।। 3।।

यतो यतः समीहसे, ततो नोऽभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः।। 4।।

सख्ये त इन्द्र वाजिनो मा भेम शवसस्पते। त्वामभि प्रणोनुमो जेतारमपराजितम्।। 5।।

भगवन्! आप निर्भय और निर्दोष हैं। आप सर्वशक्तिमान् हैं। आप सत्यस्वरूप और सदा एक रस रहने वाले हैं। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, बिजली, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी आदि सभी आपकी महिमा का गान कर रहे हैं, सब ही आपका सन्देश सुन रहे हैं, सब ही हाथ जोड़ आपकी स्तुति कर रहे हैं। ये जीव-जन्तु, पक्षी, कीट-पतंग सभी आपकी दया के प्रशंसक हैं। सभी आपकी पूजा में मग्न हैं। सभी आपके द्वार के भिक्षुक हैं। अनेक प्रकार के फल-फूल, कन्द-मूल, अन्न, ओषधियां सब ही मुक्त कंठ से आपके हित और दया को प्रकट कर रहे हैं।

भगवन् ! आप ही सबके इष्टदेव हैं, आप ही पूजा के योग्य हैं। पृथ्वी से लेकर सूर्य-पर्यन्त सब अद्भुत रचनां आप ही के गुप्त हाथों से रची गई है।

भगवन् ! जैसे आप महान् तथा विचित्र हैं वैसे ही आपके काम महान् तथा विचित्र हैं। हे देवों के देव महादेव ! आप धर्म, न्याय और प्रेम के केन्द्र हैं, यह रचना भी धर्म, न्याय और प्रेम को प्रकटा रही है। आपका ज्ञान पूर्ण और

सदा एकरस रहने वाला है। आपकी बुद्धि, आपकी दया और आपके कार्य महान् हैं। कौन आप तक पहुंच सकता है ? कौन आपका पारावार पा सकता है ?

महाराज ! आपका मन्यु हमारी मृत्यु और आपकी प्रसन्नता हमारा जीवन है। हम भूलकर भी मन, वाणी और कर्म से आपको अप्रसन्न न करें। सरलता, इन्द्रिय-दमन, विजय और समर्पण ये हमें बहुत बड़ी मात्रा में प्रदान कीजिए, जिससे कि हम आपको सदा प्रसन्न करते रहें।

भगवन् ! आप सदा हमारी रक्षा करते रहें। हमें सब प्रकार के सुख से भरपूर करते रहें। हम आपको भूल जाते हैं, परन्तु आप हमारा कभी त्याग नहीं करते।

महाराज ! हम पर कृपा करो, हम आत्मा के शब्द को ध्यान से सुनें। यह जीवन सदा ही निष्पाप रहे। आपकी सौम्यमूर्ति का ही प्रकाश होता रहे। हम आपके उपहार का सदा धन्यवाद करते रहें।

महाराज ! आपके सेवक यह मांगते हैं कि आज से मन,

वाणी, शरीर और आत्मा, सब ही आपकी पूजा में लगे रहें। हमारा समय, हमारी स्मरण-शक्ति, हमारे कर्म सभी उज्ज्वल और स्वच्छ हों। ये सब मिलकर आत्मा का कल्याण करने वाले हों।

महाराज ! आज से हम अपने अधिकार हटाकर इनको आपके ही चरणों में समर्पण करते हैं। आप ही इससे यथायोग्य काम लें। आप ही हमारे परमगुरु, परमसहायक और परमरक्षक हैं। आपके द्वार को छोड़कर अब कहां जाएं ? आप ही हमारे रक्षक हैं। आपकी रक्षा में आए हुए को दुःख और भय कहां हो सकता है ? आपके चरणों में समर्पण किए हुए मन, वाणी और शरीरादि की विभूति को कौन चुरा सकता है ? आपका क्रोध वहां ही होता है जहां आपका अधिकार नहीं माना जाता; बस, आज से हम अपने-आपको आपके पवित्र चरणों में समर्पण करके नियमपूर्वक प्रार्थना करते हैं कि आप हमें स्वीकार करें।

ओं शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

प्रार्थना–4

स विश्वकृद् विश्वविदात्मयोनिः यः कालकालो गुणी सर्वविद् यः। प्रधानक्षेत्रज्ञपतिर्गुणेशः संसारमोक्षस्थितिबन्धहेतुः।। 1।।

बृहच्च तद्दिव्यमचिन्त्यरूपं सूक्ष्माच्च तत्सूक्ष्मतरं विभाति। दूरात्सुदूरे तदिहान्तिके च पश्यत्स्विहैव निहितं गुहायाम्।। 2।।

सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्। सर्वतः श्रुतिमाँल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति।। 3।।

यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठिति, स्वर्य्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः।। 4।।

हे सर्वाधार परमात्मन् ! जो कुछ भूत, भविष्यत् और वर्तमान में हैं, उन सबके अधिष्ठाता आप हैं। वायु आपकी आज्ञा में चलती है और अग्नि आपके नियम में जलती है। आपके शासन में सूर्य और चन्द्रमा चमकते हैं, मेघ बरसता है। आप उन सबके जीवनदाता हैं, जो आंख खोलता है और सांस लेता है। आप सबके प्राणाधार और प्राणपति हैं। आप इस सारे जगत् से परे केवल सुखस्वरूप हैं, हमारा प्रणाम आपको हो। आप सबसे श्रेष्ठ हैं, आपको प्रणाम हो।

हे हृदय के स्वामिन् ! आप राजाओं के अधिराज हैं, आपके पास खाली हाथ किस भांति आयें, क्या लेकर आयें ? सब-कुछ तो आपका दिया हुआ है; हमारा प्राण, हमारी इन्द्रियां, सब आपकी दी हुई हैं। आत्मा के भी आप ही स्वामी हैं, अतः कृतज्ञ बनकर आपके निकट आते हैं। आपकी भेंट के लिए जो हमारे पास है वह आपसे पाया है, आपकी भेंट करते हैं। स्वीकार कीजिए और मुझे अपना अनुगत बना लीजिए। हमारा सर्वस्व आपके कार्य में लगे। हमारा सारा परिवार आपकी इच्छा के अधीन हो। आपके सहवास में सच्चे सुख को भोगें। हमारे छोटे-बड़े, तरुण और शिशु, पिता और भ्राता सब आनन्द में रहें। हमारे शरीरों को कभी क्लेश न हो। आपकी इच्छा में हमारा हृदय एक हो। हम एक-दूसरे को प्यार करें। पुत्र पिता का अनुगामी हो, माता का सेवक बने। पत्नी पति के प्रति मीठा और शान्तियुक्त व्यवहार करे। हम सब एक होकर आपके नाम की महिमा गाएं। विद्वानों में द्वेष मिट जावे। सब एक परिवार बनकर रहें। वेद का उपदेश हमारे घर में हो। हम

उन्नति के मार्ग में आगे बढ़ते हुए शान्तिचित्त होकर आपकी आराधना करें। हम एक हों, वैर-विरोध से बचे रहें। हमारी वाणी में मिठास हो, दृष्टि में प्यार और हृदय में विश्वास हो। हमारा अन्न और जल एक हो। हम सब स्नेह-पाश में बंधे हुए आप ही को पूजा का केन्द्र बनावें। सायं-प्रातः आपके चरणों का आश्रय लें। हमारा सर्वस्व आपके अर्पण हो, हमारा सारा परिवार आपका बनकर रहे। आपकी इच्छा से मृत्यु से पार होकर अमृत को प्राप्त करें। आपकी ही शरण पड़कर हम कहें—"आप हमारे हैं और हम आपके हैं।"

ओं शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय। बृहदारण्यक०। उप० 1.3.28
मुझे असत् से सत् की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर और मृत्यु से अमरता की ओर ले जाओ।

प्रभु-भक्ति के भजन

भजन–1

ईश्वर का जप जाप रे मन,
वृथा काहे को जन्म गंवावे।। 1।।
दीनानाथ दयालु स्वामी,
प्रकट सब जा आप रे।। 2।।
सर्वव्यापक की पूजा कर ले,
दूर होवें दुख ताप रे।। 3।।
कर सन्ध्या और पढ़ गायत्री,
मिट जावे सन्ताप रे।। 4।।
छोड़ असत् को सत् ग्रहण कर,
नष्ट होवें सब पाप रे।। 5।।
खुश होकर प्रभु विनती सुन ले,
'बेकस' करे विलाप रे।। 6।।

भजन–2

शरण प्रभु की आओ रे,
यही समय है प्यारे।। 1।।

छल-कपट और झूठ को त्यागो,
सत्य में चित लगाओ रे।। 2।।
उदय हुआ ओम् नाम का भानु,
आओ, दर्शन पाओ रे।। 3।।
पान करो इस अमृत-फल को,
उत्तम पदवी पाओ रे।। 4।।
हरि की भक्ति बिन नहीं मुक्ति,
दृढ़ विश्वास जमाओ रे।। 5।।
मानुष जन्म अमोल है यह,
वृथा न इसे गंवाओ रे।। 6।।
कर लो नाम हरि का सिमरन,
अन्त को न पछताओ रे।। 7।।
धन्य दया जो सबको पाले,
मत उसको बिसराओ रे।। 8।।
छोटे-बड़े सब मिलकर खुशी से,
गुण ईश्वर के गाओ रे।। 9।।

आरती

जय जगदीश हरे, पिता जय जगदीश हरे।
भक्त-जनन के संकट, क्षण में दूर करे।
जो ध्यावे फल पावे, दुख विनसे मन का।
सुख-सम्पत्ति घर आवे, कष्ट मिटे तन का।
मात-पिता तुम मेरे, शरण गहूं किसकी ?
तुम बिन और न दूजा, आस करूं जिसकी।
तुम पूरण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी।
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्ता।
दीनदयालु कृपालु, कृपा करो भर्ता।
तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति।
शुद्ध करो मम हृदय, धर्म में होवे गति।
दीनबन्धु दुखहर्ता, तुम रक्षक मेरे।
करुणा हस्त बढ़ाओ, द्वार पड़ा तेरे।
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।
श्रद्धा-भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।

ईश्वरोपासना

'उप' समीप 'आसना' बैठना—जब जीवात्मा परमात्मा का साक्षात् दर्शन करने के लिए उसके समीप बैठता है। उपासना की विधि यह है कि एकान्त स्थान में बैठकर अपने मन को शुद्ध करके परमात्मा में स्थिर करें, और बारम्बार वेदमन्त्रों का अर्थसहित मन में पाठ करके भगवान् की महिमा का गान करें। उपासना के कुछ मन्त्र अर्थसहित नीचे दिये जाते हैं :

अष्टाविंशानि शिवानि शग्मानि सह योगं भजन्तु मे। योगं प्रपद्ये क्षेमं च, क्षेमं प्रपद्ये योगं च नमोऽहोरात्राभ्यामस्तु।। 1।।

हे परमैश्वर्ययुक्त मंगलमय परमेश्वर ! आप की कृपा से मुझको उपासना-योग प्राप्त हो, जिससे मुझको सुख मिले। आपकी कृपा से दस इन्द्रिय, प्राण, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, विद्या, स्वभाव, शरीर और बल आपकी उपासना करें।

भूयानरात्याः शच्याः पतिस्त्वमिन्द्रासि। विभुः प्रभूरिति त्वोपास्महे वयम्।। 2।।

हे जगदीश्वर ! आप मन, वाणी और कर्म इन तीनों के पति हैं, सर्वशक्तिमान आदि विशेषणों से युक्त हैं। आप दुष्ट प्रजा, मिथ्या वाणी और पाप कर्मों को नष्ट करने में अत्यन्त समर्थ हैं। आपको सर्वव्यापक और सर्वसामर्थ्य वाले जानकर हम लोग आपकी उपासना करते हैं।

नमस्ते अस्तु पश्यत पश्य मा पश्यते। अन्नाद्येन यशसा तेजसा ब्रह्मवर्चसेन।। 3।।

अन्न आदि ऐश्वर्य, उत्तम कीर्ति, भय से रहित, विद्या से युक्त हम लोगों को करें, हम सदा आपकी उपासना करते रहें।

अम्भो अमो महः सह इति त्वोपास्महे वयम्।। 4।।

हे भगवन् ! आप सर्वव्यापक, शान्तिस्वरूप प्राण के भी प्राण हैं। सबके पूज्य, सबसे बड़े और सहनशील हैं। हम आपकी उपासना करते हैं।

अम्भो अरुणं रजतं रजः सह इति त्वोपास्महे वयम्। 5।

आप प्रकाशस्वरूप, दुःखनाशक, आनन्दस्वरूप, ऐश्वर्य से युक्त और सहनशील हैं। हम आपकी उपासना करते हैं।

उरुः पृथुः सुभूर्भुवः इति त्वोपास्महे वयम्।। 6।।

आप बलवाले, आदि-अन्तरहित, सब पदार्थों में वर्तमान और अवकाशस्वरूप से सबके आप निवासस्थान हैं। हम उपासना करके आपके ही आश्रित रहते हैं।

प्रथो वरो व्यचो लोक इति त्वोपास्महे वयम्।। 7।।

परमात्मन् ! आप जगत् में प्रसिद्ध और उत्तम हैं। इसका धारण, पालन और क्षय करने वाले हैं तथा जानने योग्य केवल आप ही हैं, दूसरा कोई नहीं।

उपासना का भजन

तेरा नाम ओंकार, कोऊ न पा सके है पार।
महा-मुनीश गए हार, गाय गाय ध्याय ध्याय।।
सत्चित् आनन्दस्वरूप, बिना रंग रहित रूप।
तू अनूप जगत्-भूप, निराकार निर्विकार।।
अजर, अमर, नित्य, अभय, ब्रह्म अखंड, अक्षय।
शुद्ध, बुद्ध, मंगलमय, तू अपार तू अधार।।
तू अभेद, तू अछेद, सर्वशास्त्र कहत वेद।
'नवलसिंह' कहे पुकार, कोऊ न कह सके विस्तार।।

धर्म के लक्षण

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।

अर्थात् जो मनुष्य धर्म का नाश करता है, धर्म उसका नाश करता है और जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म भी उसकी रक्षा करता है। धर्म ही मनुष्य का सच्चा संगी है।

धर्म क्या है ? आर्य-स्मृतिकार मनु महाराज ने धर्म का निम्नलिखित लक्षण बताए हैं—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

धर्म के दस लक्षण हैं—धृति (धैर्य), क्षमा (अपराधी के प्रति उदारता), दम (शरीर, इन्द्रियों और मन पर संयम, अस्तेय (चोरी न करना), शौच (पवित्रता), इन्द्रियनिग्रह (इन्द्रियों को वश में रखना), धी (बुद्धि), विद्या (ज्ञान), सत्य (सचाई), अक्रोध, (गुस्से में न आना)।

धार्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए मनुष्य को धर्म के इन दसों लक्षणों पर आचरण करना चाहिए।

स्वाध्याय की महिमा

स्वाध्यायाद् योगमासीत, योगात्स्वाध्यायमामनेत्।
स्वाध्याययोगसम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते।। 1।।

स्वाध्याय से मनुष्य योग को धारण करे। योग से स्वाध्याय का मनन करे। दोनों को पालन करने से परमात्मा अन्तःकरण में प्रकाशित होते हैं।

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति। तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते।। 2।।

ज्यों-ज्यों पुरुष शास्त्र को पढ़ता है, त्यों-त्यों उसका ज्ञान बढ़ता जाता है, और विज्ञान रुचिकर होता है।

योगशास्त्र की टीका में महर्षि व्यास लिखते हैं कि मोक्षशास्त्र व आत्मशास्त्र का पाठ करना स्वाध्याय कहलाता है।

वेदों के मन्त्र, जिनमें आत्मा और परमात्मा सम्बन्धी विषय हैं, उपनिषदें, योगदर्शन, वेदान्त दर्शन, गीता, ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका के प्रार्थना, स्तुति और उपासना के

विषय, सत्यार्थ-प्रकाश का नवम समुल्लास—इनके विशेष रूप से स्वाध्याय से मनुष्य ज्ञान-मार्ग की ओर बढ़ता है। यथार्थ ज्ञान ही मुक्ति का सच्चा द्वार है। स्वाध्याय करने से सब इष्ट पदार्थ प्राप्त होते हैं। ईश्वर की असंख्य शक्तियां स्वाध्यायशील मनुष्य की पूरी सहायता करती हैं। इससे ऋषि-ऋण दूर होता है। स्वाध्याय से हम प्रतिदिन प्रातःकाल ऋषि-मुनियों से मिलाप कर सकते हैं। ऋषि दयानन्द अपने अन्त के दिनों तक स्वाध्याय करते रहे थे।

स्वाध्याय नित्य प्रातःकाल जिस प्रकार भी हो सके, थोड़ा-बहुत समय निकालकर करना चाहिए। स्वाध्याय बुद्धि को तीव्र और आत्मा को उज्ज्वल बनाता है।

स्वाध्याय के लिए कुछ मन्त्र

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते। तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा।। 1।।

जो प्रजापति अर्थात् सब जगत् का स्वामी है, वही जड़ और चेतन के भीतर और बाहर अन्तर्यामी रूप से सर्वत्र

व्याप्त हो रहा है। जो सब जगत् को उत्पन्न करके अपने-आप सदा अजन्मा रहता है, उस परब्रह्म की प्राप्ति का कारण सत्य का आचरण और सत्य-विद्या है, उसको विद्वान् लोग प्राप्त करके परमेश्वर को प्राप्त होते हैं।

उसी परमेश्वर में जिसमें सभी लोग ठहर रहे हैं, ज्ञानी लोग भी, सत्य निश्चय से मोक्ष-सुख को प्राप्त होकर जन्म-मरण आदि से छूटकर सदा आनन्द में रहते हैं।

यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये।। 2।।

जो परमात्मा विद्वानों के लिए सदा प्रकाशस्वरूप है अर्थात् उनके आत्माओं को जो प्रकाशमय कर देता है, वह उनका पुरोहित अर्थात् अत्यन्त सुखों को धारण और पोषण करने वाला है, उन सबसे आदि, आनन्दस्वरूप और सत्य में रुचि कराने वाले ब्रह्म को नमस्कार हो।

रुचं ब्राह्मं जनयन्तो, देवा अग्रे तदब्रुवन्। यस्त्वैवंब्राह्मणो विद्यात् तस्य देवा असन् वशे।। 3।।

जो ब्रह्म का ज्ञान है, वही आनन्द देने वाला, और

मनुष्य को उसमें रुचि बढ़ाने वाला है, जिस ज्ञान से विद्वान् लोग अन्य मनुष्यों के आगे उपदेश करके उनको आनन्दित कर देते हैं। जो मनुष्य इस प्रकार से ब्रह्म को जानता है उस विद्वान् के सब मन आदि इन्द्रिय वश में हो जाते हैं, अन्य के नहीं।

यत्परममवमं यच्च मध्यमम्, प्रजापतिः ससृजे विश्वरूपम्। कियता स्कम्भः प्रविवेश तत्र यन्न प्राविशेत् कियत्तद् बभूव।। 4।।

जो उत्तम, मध्यम और नीच स्वभाव से तीन प्रकार का जगत् है, उस सबको परमेश्वर ने ही रचा है। उसने इस जगत् में नाना प्रकार की रचना की है और वही इस सब रचना को यथावत् जानता है, इस जगत् में जो विद्वान् होते हैं वे भी कुछ-कुछ परमेश्वर की रचना के गुणों को जानते हैं। परमेश्वर सबको रचता है, आप रचना में कभी नहीं आता।

मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। यजु० 36.18
मैं मित्र की दृष्टि से सभी प्राणियों को देखूँ।

सुभाषित-रत्नावली

1. **सत्यं वद।** सत्य बोल।। 1।।
2. **धर्मं चर।** धर्म पर चल।। 2।।
3. **मा गृधः।** लालच मत कर।। 3।।
4. **ओं क्रतो स्मर।** हे जीव ! ओ३म् का जाप कर।। 4।।
5. **क्लिब स्मर।** शक्ति के लिए जाप कर।। 5।।
6. **कृतं स्मर।** किए कर्म को याद कर।। 6।।
7. **मनः सत्येन शुध्यति।**
   मन सत्य बोलने से शुद्ध होता है।। 7।।
8. **वर्जयेद् मधुमांसम्।** मांस और मद्य को छोड़ दो।। 8।।
9. **अश्मा भव।** पत्थर की न्याईं दृढ़ हो।। 9।।
10. **परशुर्भव।** कुल्हाड़े के समान हो।। 10।।
11. **अश्मानं तन्वं कृधि।**
    शरीर को व्यायाम से पत्थर बना लो।। 11।।
12. **घृतेन तन्वं वर्धयस्व।** घी से शरीर को बढ़ाओ।। 12।।
13. **विद्या धर्मेण शोभते।** विद्या धर्म से शोभा देती है।। 13।।
14. **विद्याविहीनः पशुभिः समानः।**
    विद्या के बिना मनुष्य पशुओं के समान है।। 14।।
15. **क्षमा वीरस्य भूषणम्।**

क्षमा वीर पुरुष का आभूषण है।। 15।।

16. **पुरा जरसो मा मृथाः।** बुढ़ापे से पहले मत मर।। 16।।

17. **यतेमहि स्वराज्ये।** स्वराज्य-प्राप्ति में हम यत्न करें।।17।।

18. **सत्यं वक्ष्यामि नानृतम्।**
सत्य ही सदा बोलूंगा, झूठ नहीं।। 18।।

19. **यतो धर्मस्ततो जयः।**
जहां धर्म है वहीं विजय होती है।। 19।।

20. **न रिष्येत् त्वावतः सखा।**
ईश्वर का मित्र कभी कष्ट नहीं पाता।। 20।।

21. **वयं जयेम त्वया युजः।**
हम आपके साथ मिले हुए जीतें।। 21।।

22. **तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः।**
सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म के लिए नमस्कार हो।। 22।।

23. **ईशावास्यमिदं सर्वम्।** ईश्वर सब जगह व्यापक है।।23।।

24. **पशून् पाहि।** पशुओं की रक्षा कर।। 24।।

25. **गां मा हिंसीः।** गौ को मत मार।। 25।।

26. **अविं मा हिंसीः।** भेड़ व बकरी को मत मार।। 26।।

27. **इमं मा हिंसीर्द्विपाद-पशुम्।**
दो खुर वाले पशु को मत मार।। 27।।

28. **मांसं नाश्नीयात्।** कोई मांस न खाए।। 28।।

29. **अश्वं मा हिंसीः।** घोड़े को मत मार।। 29।।

30. **कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।**
सारे संसार को आर्य बना।। 30।।

31. **अस्तु मयि श्रुतम्।** मैं वेदपाठी बनूँ।। 31।।

32. **संश्रुतेन गमेमहि।** हम वेदानुसार चलें।। 32।।

33. **मा तेन विराधिषि।** वेद का विरोध मत कर।। 33।।

34. **सपत्ना अस्मदधरे भवन्तु।** शत्रु हमारे अधीन हों।। 34।।

35. **अहं भूया समुत्तमः।** मैं सबसे उत्तम बनूं।। 35।।

36. **वयं स्याम पतयो रयीणाम्।**
हम धन के स्वामी बनें।। 36।।

37. **अभयं पशुभ्यः।** पशुओं से अभय हो।। 37।।

38. **सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।**
दिशाएं और आशाएं मेरी मित्र हों।। 38।।

39. **अक्षैर्मा दीव्यः।** जूआ मत खेल।। 39।।

40. **कृषिं कृषस्व।** खेती-बाड़ी कर।। 40।।

41. **यतोऽभ्युदयनिः श्रेयससिद्धिः स धर्मः।**
जिस काम से इस लोक तथा परलोक का सुधार हो, वह धर्म है।। 41।।

42. **ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।**
ब्रह्मचर्य और तप से विद्वानों ने मृत्यु को जीता।। 42।।

43. **नाऽनाश्रान्ताय श्रीरस्ति।** बिना कष्ट धन नहीं मिलता।। 43।।

44. **इन्द्र इच्चरतः सखा।**
परिश्रमी की प्रभु सहायता करता है।। 44।।

45. **नो राजा कृषिं तनोतु।** हमारा राजा खेती को बढ़ाए।। 45।।

46. **सहसा विदधीत न क्रियाम्।**
जल्दी में काम मत करो।। 46।।

47 **ब्रह्मचर्य-प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।**
ब्रह्मचर्य से वीर्य प्राप्त होता है।। 47।।

48. **वयं भगवन्तः स्याम।** हम धनवान् बनें।। 48।।

49. **अन्नं न निन्द्यात्।** अन्न की निन्दा न करो।। 49।।

50. **चरैवेति चरैवेति।** यत्न करो। यत्न करो।। 50।।

51. **संतां सङ्गों हि भेषजम्।**
सज्जनों का संग ही ओषधि है।। 51।।

स्वास्थ्य के नियम

जल

सदा शीतल जल से स्नान करो।

केवल रोग में गर्म जल से नहाओ।

खाने के तत्काल पहले व पीछे जल मत पीओ, भोजन

में थोड़ा जल पीओ, यदि भोजन के एक घण्टा पीछे जल पीवें, तो अधिक लाभ होता है।

4. ग्रीष्म-काल में बर्फ तथा सोडा मत पीओ, इनसे प्यास तथा शुष्कता बढ़ती है तथा पाचन-शक्ति घट जाती है।
5. विशूचिका (हैजे) में कुएं का जल उबालकर पीओ।
6. प्रतिश्याय (जुकाम), खांसी तथा शीत-ऋतु में सदा उष्ण जल सेवन करो।
7. स्वभाव से चाय मत पीओ। यह भूख, प्यास और नींद कम करती है, अण्डकोषों को निर्बल बनाती तथा मूत्र अधिक लाती है।

वायु

1. खुली वायु में नित्य व्यायाम करो।
2. खुले मैदान और उपवन (बाग) में जाकर गहरे श्वास लो।
3. तंग गली-कूचों में रहना छोड़ दो।
4. सोते समय झरोखों (रोशनदान) को खुला रखो।

5. बहुत सर्दी में सिर ढांप लो, परन्तु मुंह खुला रखो।
6. रोगी के कमरे में बहुत मत रहो।
7. सदा नाक से श्वास लिया करो।

भोजन

1. भोजन शनैः-शनैः चबा-चबाकर खाओ।
2. स्वादु भोजन अधिक मत खाओ।
3. अजीर्ण में कुछ मत खाओ। कभी-कभी उपवास लाभदायक होगा।
4. कब्ज़ में मोटे आटे की रोटी तथा साग व फल खाओ।
5. भोजनशाला स्वच्छ, सुन्दर और खुली होनी चाहिए।
6. उष्ण पदार्थ खाकर तत्काल ठंडी वस्तु मत खाओ।
7. खटाई और दूध एक साथ मत खाओ।
8. मूली, दही, पनीर इकट्ठे मत खाओ।
9. भोजन से पूर्व तथा पीछे हाथ, जिह्वा, दांत, गला जल से स्वच्छ करो।
10. भोजन के तत्काल पीछे व्यायाम, स्त्री-भोग, स्नान, चिन्ता तथा क्रोध करना अत्यन्त हानिकारक है।

11. दो काल ही भोजन करो।
12. बार-बार खाना आमाशय को निर्बल करता है, एक बार दूध पीना चाहिए।
13. अन्न की निन्दा मत करो।
14. पांव धोकर भोजन खाओ।
15. मांस मत खाओ।

निद्रा

1. सोने से तीन घण्टे पूर्व भोजन करो।
2. रात को जल, दूध, मिठाई न खाओ।
3. पीठ के बल न सोओ, अपितु पहलू के बल सोया करो, विशेषकर जबकि स्वप्नदोष का रोग हो।
4. सोने से पन्द्रह मिनट पहले दिमागी काम, चिन्ता, क्रोध, निराशा तथा रोग की वार्ता आदि छोड़ दो।
5. सोने से पहले थोड़े-से गहरे श्वास खुले स्थान तथा वायु में लेकर प्राणायाम करो तथा कहो कि—
"मैं आज से बहुत गहरी नींद सोऊंगा, सोना मेरा स्वाभाविक अधिकार है।"

6. साधारण प्राणायाम तथा तेल की अभ्यंग (मालिश) अच्छी नींद लाती है।
7. सोने से पहले शौच, मूत्रादि अवश्य कर लेना चाहिए।
8. किसी से लड़ाई-झगड़ा न करो।
9. मैले वस्त्र न पहनो।
10. रात्रि और दिन के वस्त्र पृथक् रखो।
11. सायं-प्रातः सोते रहना आयु को घटाता है।
12. ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करो।
13. ज्ञानियों तथा वृद्धों की सेवा करो।
14. सर्दियों में सूर्य-सेवन करो।
15. मन, वचन, कर्म से सत्य स्वभाव वाले बनो।
16. मल-मूत्र के वेग को मत रोको।
17. सदा सन्तोषी रहो।

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु। यजु. 34.।
मेरा मन कल्याणमय संकल्पों वाला हो।

योग के आसन

योग के आसनों से प्रायः प्रत्येक शारीरिक रोग दूर हो सकता है। सब प्रकार के विदेशी व्यायामों से इनका व्यायाम उत्तम है। शरीर सुन्दर, सुडौल सुगठित और तेजस्वी हो जाता है।

(1) पद्मासन—पांव की नस-नाड़ियों की शुद्धि, ध्यान में सुगमता, पाचन-शक्ति की वृद्धि और पेट के सब दोष दूर हो जाते हैं।

(2) पादहस्तासन—जठराग्नि की वृद्धि, शौच शुद्धि, अजीर्णनाश, कृमि-विकार, तिल्ली-विकार तथा मेदा घट जाता है।

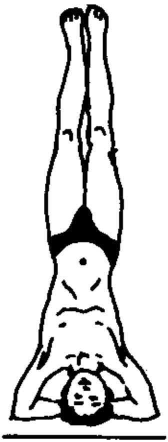

(3) शीर्षासन—इससे रक्त शुद्धि, हाथ-पांव के सुन्न का दूर होना, सिर, मुख और छाती का रंग अधिक लाल एवं तेजस्वी, पेट के सब रोग दूर, बुद्धि तथा स्मरण शक्ति की वृद्धि, वीर्य की ऊर्ध्वगति, स्वप्नदोष का नाश, पाचन शक्ति की वृद्धि, सिर के श्वेत बाल काले, वृद्धावस्था दूर, नेत्र-विकार का नाश, मुख की अरुचि, कण्ठ दोष, गला पड़ना, छाती की निर्बलता, यकृत् और प्लीहा आदि सब रोग दूर हो जाते हैं।

(4) पश्चिमोत्तानासन—यह एक प्रकार से पादहस्तासन ही है। वे ही लाभ इससे होते हैं।

अदीनाः स्याम शरदः शतम्। भूयश्च शरदः शतात्। यजु० 36.24
सौ वर्ष तक हम स्वस्थ रहें, सौ वर्षों से आगे भी।

महर्षि दयानन्द

महर्षि दयानन्द निस्सन्देह इस युग के जीवनदाता हैं। भारत में इस समय जो कुछ जागृति प्रतीत होती है वह सब उन्हीं का पुण्य-प्रताप है। लोग पक्षपात के कारण इस बात को मानें या न मानें परन्तु सत्य तो यह है कि उनके प्रचार से सब कपोल-कल्पित मत-मतान्तर अपनी नींव से हिल चुके हैं और प्रत्येक पन्थ यत्न कर रहा है कि वह अपने माने हुए सिद्धान्तों को ऋषि की बतलाई हुई सचाई के अनुकूल सिद्ध करे।

ऋषि से पूर्व किसी हिन्दू में यह साहस न था कि वह अपने धर्म, अपने वेदशास्त्र और अपने महापुरुषों के लिए अभिमान कर सके क्योंकि वैदिक धर्म के शत्रुओं ने उन सबको दूषित और कलंकित कर रखा था। इसी कारण सहस्रों आर्य बालक दिन-प्रतिदिन ईसाइयों और यवनों के ग्रास हो रहे थे। परन्तु जीवनदाता ऋषि दयानन्द ने अपने तपोबल से हीन और दीन आर्यजाति को नवजीवन प्रदान

किया। स्वामी जी ने आर्यजाति के सिंहपुत्रों को, जो अविद्या से भेड़ों में मिले हुए थे, इस सत्य का बोध कराया कि वे सिंह हैं। हिन्दू अपने वेदशास्त्रों के नाम तक भूल गए थे। स्वामी जी ने उनका पुनः प्रचार करके आर्यों को इस योग्य बनाया कि वे अपने धर्म, वेदशास्त्रों और अपने ऋषि-मुनियों के लिए अभिमान कर सकें। उनके ही प्रयत्न का फल है कि आज कोई हिन्दू धर्म के कारण पतित नहीं होता।

ऋषि के जीवन और काम को विस्तारपूर्वक जानने के लिए प्रत्येक आर्य को उनका सम्पूर्ण जीवन चरित्र पढ़ना चाहिए। परन्तु यहां उनके सम्बन्ध में दो-चार आवश्यक बातें ही दी जा रही हैं।

जीवन-परिचय

स्वामी दयानन्द का जन्म सन् **1824** ई० में गुजरात काठियावाड़ प्रान्त के टंकारा ग्राम में पंडित कृष्णजी तिवारी के घर हुआ था। उनका जन्मनाम मूलशंकर था। वे प्रायः मूलजी कहलाया करते थे। बारह-चौदह वर्ष की आयु में

ही उन्होंने बहुत-सी विद्या प्राप्त कर ली थी। उनके मन की प्रवृत्ति खोज की ओर अधिक रहती थी। शिव के उपासक होने के कारण शिवरात्रि के दिन पण्डित कृष्णजी ने अपने पुत्र मूलशंकर से भी शिवरात्रि को व्रत रखवाया और उसे कहा कि शिवालय में जागकर शिव को प्रसन्न करना होगा। मूलशंकर ने स्वीकार किया। परन्तु जब आधी रात हो चुकी तो वह क्या देखता है कि मन्दिर के पुजारी, उसके पिता और अन्य उपासक सब सो गए। इतने में एक चूहा निकला और पत्थर के शिव पर धरी हुई सब मिठाई चट कर गया। इस घटना को देख बालक मूलशंकर चकित रह गया कि क्या यही शिव है, जिसका वर्णन पिताजी इतनी बड़ाई के साथ किया करते थे ? क्या इसी शिव की उपासना के लिए रात्रि-जागरण और व्रत रखवाया गया है, जो एक चूहे से भी अपनी रक्षा नहीं कर सकता है ? पिता से मन का सन्देह दूर कराना चाहा परन्तु सन्तोषजनक उत्तर न मिला। उसी दिन से सच्चे शिव का पता लगाने का प्रण कर लिया। उसके दो-तीन वर्ष पश्चात् उनकी भगिनी और चाचा की मृत्यु हो

गई। इन दृश्यों को देखकर उन्होंने मृत्यु का पता लगाने का संकल्प कर लिया। ये दो घटनाएं थीं, जिन्होंने मूलशंकर के मन पर चोट लगाई, उन्हें घरबार छोड़ने पर विवश किया और इन्हीं के कारण मूलशंकर ने दयानन्द बनकर इतनी उच्च पदवी को प्राप्त किया। सच्चे शिव की खोज में मूलशंकर ने सारे वन-पर्वत छान मारे, परन्तु मन को शान्ति प्राप्त न हुई। दिन-रात इसी चिन्ता में फिरते-फिरते उन्हें पता चला कि मथुरा में एक प्रज्ञाचक्षु (अंधे) दण्डी स्वामी विरजानन्द रहते हैं, वे वेदों के विद्वान् हैं। **36** वर्ष की आयु में मूलशंकर ने, जो उस समय तक संन्यास लेकर दयानन्द बन चुका था, मथुरा पहुंचकर स्वामी विरजानन्द का द्वार खटखटाया। दण्डी जी के उपदेशों और वेदशास्त्रों के स्वाध्याय से स्वामी दयानन्द के संशय दूर हो गए। जब दण्डी जी ने देखा कि दयानन्द विद्वान् हो गया है तो एक दिन समावर्तन के लिए नियत किया। दयानन्द के साथ तीन और विद्यार्थी भी पढ़ा करते थे। चारों गुरुजी को दक्षिणा देने के लिए कुछ भेंट लेने गए। दयानन्द को कुछ लौंग मिलीं,

उसने हाथ जोड़कर उन्हें गुरुजी को भेंट किया और कहा, "महाराज ! जो कुछ मिला, श्रद्धापूर्वक आपकी सेवा में उपस्थित करता हूं।" स्वामी विरजानन्द बोले, "बेटा ! मुझे इन लौंगों की आवश्यकता नहीं है। मैं कुछ और चाहता हूं, यदि दे सकते हो तो दो।" दयानन्द ने हाथ जोड़कर कहा, "भगवन् ! आज्ञा कीजिए।" गुरुजी बोले, "संसार में अन्धकार फैल रहा है, मत-मतान्तरों के पाखंड से मनुष्य पीड़ित हो रहे हैं। बेटा ! जो ज्ञान तुम्हें दिया है, उसको फैलाकर तिमिर का नाश करो। मैं तुमसे यही दक्षिणा मांगता हूं। क्या तुममें से कोई यह दक्षिणा देने को कटिबद्ध है ?"

गुरुजी के ये वचन सुनकर तीन शिष्य तो चुप हो गए, परन्तु दयानन्द कुछ सोचकर बोले –

"भगवन् ! तथास्तु, मैं अपना जीवन आपको देता हूं। आपकी आज्ञा का पालन करते हुए आयुभर वेदों का प्रचार करूंगा।" स्वामी विरजानन्द ने आशीर्वाद दिया और दयानन्द उनसे विदा हुए। चार वर्ष तक लश्कर, ग्वालियर आदि स्थानों में प्रचार कर हरिद्वार के कुम्भ-मेले में चले

गए, और वहां 'पाखण्ड-खण्डिनी पताका' गाड़कर पौराणिक मतों का भली भांति खण्डन किया। परिणाम यह हुआ कि पाखण्डी लोग उनके शत्रु बन गए और उन्होंने स्वामीजी को मार डालने का निश्चय कर लिया। प्रथम बार उन्होंने स्वामीजी की जगह भूल से किसी और मनुष्य को गंगा में डूबो दिया। दूसरी बार पान में विष दिया। तीसरी बार कर्णवास में राव कर्णसिंह ने खड्ग लेकर आक्रमण किया परन्तु स्वामीजी के तेज से उसका खड्ग गिर पड़ा। जब सब आक्रमण निष्फल हो गए तो पंडितों ने मिलकर शास्त्रार्थ की ठानी। काशी आदि स्थानों पर शास्त्रार्थ में भी बड़े-बड़े धुरन्धर पण्डित परास्त हुए। जब स्वामीजी की विद्वत्ता और बल का डंका सारे भारत में बज गया तो उन्होंने भारत के बड़े-बड़े नगरों में फिरकर प्रचार किया। आर्यसमाज के सम्बन्ध में जितनी भी संस्थाएं और जितने भी काम दिखाई देते हैं, वह उस ऋषि के तपोबल का ही परिणाम हैं।

मृत्यु से कुछ दिन पूर्व स्वामी जी जोधपुर गए और वहां

के राजा को उपदेश दिया। राजा उनका शिष्य बन गया परन्तु स्वामीजी ने सुना कि राजा ने वेश्या रखी हुई है। एक दिन उसी वेश्या की पालकी राजद्वार में आई। स्वामीजी से रहा न गया और राजद्वार में ही स्पष्ट कह दिया कि सिंह को कुतिया का संग नहीं करना चाहिए। राजा पर तो इसका अच्छा प्रभाव पड़ा, परन्तु वह वेश्या स्वामीजी की वैरिन बन गई और उसने मंत्रियों को अपने साथ मिलाकर किसी मनुष्य से उनको विष दिला दिया। अनर्थ यह हुआ कि जो डाक्टर उनकी चिकित्सा के लिए नियत हुआ, वह भी इस पशु मण्डली से मिला हुआ था, जिससे लाभ के स्थान पर दिन-प्रतिदिन अवस्था बिगड़ती ही गई।

वहां से स्वामीजी उसी अवस्था में पालकी पर अजमेर लाए गए। और उनको निश्चय हो गया कि उनका अन्तकाल आ पहुंचा है। जिस प्रकार राजा के पास जाने के लिए विशेष तैयारी की जाती है, उसी प्रकार जिस दिन स्वामीजी को अपने परमपिता की गोद में जाना था, उस दिन क्षौर (हजामत) कराई, शरीर को स्वच्छ किया, वेदमन्त्रों का

उच्चारण किया और अन्त में यह कहकर शरीर को छोड़ दिया, "ईश्वर ! तेरी इच्छा पूर्ण हो !"

स्वामीजी ने **30** अक्तूबर, **1883** ई० में परलोकगमन किया। इस समय उनकी अवस्था **59** वर्ष की थी।

स्वामीजी की विशेषताएं

(1) स्वामीजी वेदों के बड़े भक्त थे। शंकर स्वामी के पश्चात् वेदों का पुनरुद्धार स्वामीजी ने ही किया था।

(2) स्वामीजी बालब्रह्मचारी थे। उन्होंने विद्या, बुद्धि और बल से संसार को ब्रह्मचर्य का महत्त्व दिखला दिया।

(3) स्वामीजी हठी न थे। एक दिन उनके मुख से कोई अशुद्ध शब्द निकल गया। किसी ने भरी सभा में स्वामीजी को टोक दिया, स्वामीजी ने उसे स्वीकार कर लिया।

(4) स्वामी जी अपनी बात के बड़े पक्के थे। एक दिन किसी हिन्दू ने उनको अपने यहां न ठहराया तो मुसलमान लोग अपने यहां ले गए। वहां उनका भी खण्डन किया।

ऋषि दयानन्द के उपकार

1. एक ईश्वरोपासना; एक सन्ध्या
2. वेदों का प्रचार तथा ऊंचा स्थान
3. स्त्री-जाति का सम्मान 4. विधवाओं का पुनरुद्धार
5. शुद्धि का द्वार खोल देना 6. अछूतों का उद्धार
7. संस्कृत का प्रचार 8. वैदिक संस्कारों की एकता
9. जातीय प्रेम तथा सहानुभूति
10. स्वदेश-प्रेम और भक्ति 11. बाल-विवाह को रोकना
12. प्राचीन आर्य-ग्रंथों से प्रेम

प्रतिज्ञा, गीत, राष्ट्रगीत

आर्यवीर की प्रतिज्ञा

दयानन्द के वीर सैनिक बनेंगे।
दयानन्द का काम पूरा करेंगे।।
उठाए ध्वजा धर्म की हम फिरेंगे।
उसी के लिए हम जिएंगे, मरेंगे।।

गुंजाएंगे वेदों के हम गीत गाकर।
दिखाएंगे दुनिया पुरानी बनाकर।।
बसाएंगे शहरों को जंगल बनाकर।
बिताएंगे जीवन को सच्चा बनाकर।।
उठाएंगे ऋषियों की आवाज़ को हम।
बनाएंगे फिर स्वर्ग संसार को हम।।
मिटाएंगे सब सम्प्रदायों के मत को।
बनाएंगे फिर आर्य सारे जगत् को।।
वही प्रेम-गंगा यहां फिर बहेगी।
जो संसार की तापमाला हरेगी।।
कहेगा जगत् फिर से इक स्वर में सारा।
वही वृद्ध भारत गुरु है हमारा।।

आर्यध्वज-गीत

विजयी विश्व ओ३म् का प्यारा।
झंडा ऊंचा रहे हमारा।
सदा शक्ति बरसाने वाला।
प्रेम-सुधा सरसाने वाला।।

वीरों को हर्षाने वाला।
आर्यजाति का तन-मन सारा।।
झंडा ....

इस झंडे के नीचे निर्भय।
लखकर जोश बढ़े क्षण-क्षण में।।
कांपे शत्रु देखकर मन में।
मिट जाए भय संकट सारा।।
झंडा ....

आओ, प्यारे वीरो आओ।
वैदिक-धर्म पे बलि-बलि जाओ।।
एक-साथ सब मिलकर गाओ।
प्यारा आर्यावर्त्त हमारा।।
झंडा ....

शान न इसकी जाने पाए।
चाहे जान भले ही जाए।।
विश्व विजय करके दिखलाएं।
तब होवे प्रण पूर्ण हमारा।।
झंडा ....

वेद का राष्ट्रगीत

विनती तुझसे है भगवान्, हमको दो ऐसा वरदान ।
ऐसी कृपा करो अखिलेश, उन्नत होवे भारत देश।
जग-भर में पाए सम्मान, हमको दो ..... ।।
ब्राह्मण यहां यशस्वी होवें, तेजस्वी, वर्चस्वी होवें।
होवें ज्ञानवान्, विद्वान्, हमको दो ..... ।।
क्षत्रिय शूर महारथि होवें, निपुण शस्त्र-चालन में होवें।
रण-विजयी अतुलित बलवान्, हमको दो .... ।।
बना योजना नित्य विशाल, करें देश को मालामाल।
वैश्य बनें दानी, धनवान्, हमको दो .... ।।
गौएं होवें खूब दुधारी, खूब बहाएं अमृतधारा
सब जन करें अमृत का पान, हमको दो .... ।।
सती और साध्वी महिला हों, रूपवती विदुषी कुशला हों।
होवें सकल गुणों की खान, हमको दो .... ।।
कृषि हेतु जब-जब हम चाहें, जलधर जलधारा बरसाएं।
प्रचुर यहां होवें धन-धान, हमको दो .... ।।
सब हों स्वस्थ, सुखी, समृद्ध, होवें बाल, युवा और वृद्ध।
प्राप्त करें सब सुख सामान, हमको दो .... ।।

प्रवेश-पद्धति

जन्म से वैदिक धर्म को न मानने वाले जिस पुरुष या स्त्री को आर्यसमाज अथवा आर्यजाति में प्रवेश कराना हो उसको अपने-अपने देश में प्रचलित रीति से क्षौर कराके (यदि स्त्री हो तो क्षौर न कराये), भली भांति स्नान कराके, (स्त्री हो तो सिर सहित स्नान करायें) बहुत स्वच्छ वस्त्र पहना के, वेदी पर आने से पहले सब लोगों के बीच में उससे नीचे के मंत्रों का पाठ कराया जाये और अर्थ भी सुना दिया जाये। ये ही मन्त्र बोलकर आचार्य उसके ऊपर कुछ जल के छींटे भी दे दे।

पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि, जातवेदः पुनीहि माम्।। 1।।

(देवजनाः) हे सब विद्वान् और श्रेष्ठ पुरुषो ! आप (माम्) मुझको (पुनन्तु) पवित्र कीजिए अर्थात् समझिए। आप (मनसा) मन के साथ (धियः) बुद्धियों या कर्मों को भी अब (पुनन्तु) पवित्र समझिए। (विश्वा) सब (भूतानि)

प्राणी अर्थात् स्त्री-पुरुष आपकी कृपा से मुझे (पुनन्तु) पवित्र करें अथवा समझें। (जातवेदः) हे ज्ञानी आचार्य ! आप (माम्) मुझे इन सबके सामने (पुनीहि) पवित्र कीजिए।

पवित्रेण पुनीहि मां, शुक्रेण देव दीद्यत्। अग्ने ! क्रत्वा क्रतूननु।। 2।।

(देव) हे शुभगुणयुक्त (अग्ने) ज्ञान के प्रकाशकारक आचार्य ! आप (दीद्यत्) अतिदीप्यमान होते हुए (शुक्रेण) शुद्ध (पवित्रेण) पवित्र कर्म से (मां) मुझे (पुनीहि) पवित्र करें। (क्रतून् अनु) और मेरे यज्ञों को ध्यान में रखकर (क्रत्वा) यज्ञ कर्म से मुझको पवित्र कीजिए।

यत्ते पवित्रमर्चिषि, अग्ने विततमन्तरा। ब्रह्म तेन पुनातु माम्।। 3।।

(अग्ने) हे ज्ञान से तेजस्वी आचार्य, (ते) आपको (अर्चिषि) अग्नि की लपट के तुल्य चमत्कार बुद्धि से (अन्तरा) भीतर (यत्) जो (पवित्र) शुद्ध (ब्रह्म) वेदज्ञान (वितत) फैला व भरा है, (तेन) उसमें (मां) मुझे (पुनातु) पवित्र कीजिए, अर्थात् उसका उपदेश कीजिए जिससे अपना

आचरण वेदानुकल कर सकूं।

पवमानः सो अद्य नः, पवित्रेण विचर्षणिः। यः पोता स पुनातु माम्।। 4।।

(पवमानः) वेद का उपदेश करके पवित्र करने वाला (विचर्षणिः) किए तथा न किए हुए सबको जानने वाला है। (सः) वह परमात्मा (अद्य) आज (नः) मुझे (पवित्रेण) सदा पवित्र कर्म करने से (पुनातु) पवित्र करे और (यः) जो (पोता) स्वभाव से अर्थात् बिना स्वार्थ वाले कारण से ही पवित्र करने वाला है, (सः) वह परमात्मा (मां) मुझे पवित्र करे। अर्थात् आज मैं सबके सामने परमात्मा से यह प्रतिज्ञा करता हूं कि कभी वेद विरुद्ध कार्य न करूंगा, जिससे अपवित्र होऊं।

इन मंत्रों के पाठ के बाद वेदी में आसन पर बैठकर आचार्य 'शन्नो देवी' मंत्र से उसे आचमन कराये और यज्ञो-पवीत पहनाये तथा 'गायत्री' मंत्र उच्चारण कराये। संक्षेप में अर्थ भी सुना देना उचित है। फिर यथाविधि प्रार्थनामंत्र, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण और सामान्य-प्रकरण से सम्पूर्ण

हवन को समाप्त करके पूर्णाहुति 'सर्वं वै पूर्णं स्वाहा' से पहले नीचे के मंत्रों से आहुति देनी चाहिए।

यद्देवा देवहेळनं, देवासश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनसो, विश्वान्मुञ्चत्वंहसः।। 1।।

(देवाः देवासः) हे विद्वानो ! (वयं) हमने (यत्) जो (देवहेळनं) विद्वानों का अपराध (चकृमा) किया है। (अग्निः) यह यज्ञ की भौतिक अग्नि व ज्ञानी आचार्य व प्रकाशरूप परमात्मा (तस्मात्) उस (एनसः) पाप से (मां) मुझे (मुञ्चतु) छुड़ाये और (विश्वात्) समस्त (अंहसः) पाप से छुड़ाये।

यदि दिवा यदि नक्तम्, एनांसि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनसो, विश्वान्मुञ्चत्वंहसः।। 2।।

(यदि) यदि (दिवा) दिन में, यदि (नक्त) रात में (वयं) हमने (एनांसि) पाप (चकृमा) किए हैं, तो (वायु) भौतिक वायु व अपने ज्ञान से सर्वत्र पहुंच सकने वाला आचार्य व ईश्वर (शेष आगे की भांति)।

यदि जाग्रद् यदि स्वप्ने, एनांसि चकृमा वयम्। सूर्यो मां तस्मादेनसो, विश्वान्मुञ्चत्वंहसः।। 3।।

यदि (जाग्रद्) जागने की अवस्था में, यदि (स्वप्ने) सोने की अवस्था में (वयं) हमने (एनांसि चकृमा) पाप किए हैं तो (सूर्य) भौतिक सूर्य व ज्ञान का प्रकाशक आचार्य व परमात्मा (आगे पहले की भांति)।

यद् ग्रामे यदरण्ये, यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छद्रे यदर्ये यद् एनश्चकृमा वयम्, यदेकस्याधिधर्मणि तस्यावयजनमसि।। 4।।

(यत्) जो (ग्रामे) गांव में, (यत् अरण्ये) जंगल में, (यत् सभायां) सभा में (पक्षपातादि), (यत् इन्द्रिये) इन्द्रिय में, (परनिन्दा, परनारी), (यत् शूद्रे) शूद्र के सम्बन्धी, (यदर्ये) जो देवों के सम्बन्धी, (एनः) पाप को (वयं) हम (चकृमा) कर चुके हैं (एकस्या) स्त्री पुरुष दोनों में से एक के भी (अधिधर्मणि) धर्म के सम्बन्धी (तस्य) उस पाप के हे आचार्य, आप (अवयजनं) नाशक (असि) हैं।

यदि कोई जन्म से वेद-विरोधी न हो, किसी कारणवश पतित (वेद-विरोधी, ईसाई, यवन आदि मत में प्रविष्ट) हो गया हो और वैदिक धर्मियों में प्रविष्ट होना चाहे तो उससे नीचे के मन्त्र का पाठ भी कराया जाये। हमारी सम्मति में जन्म

के पतित से भी इस मन्त्र का पाठ कराना अनुचित नहीं—

यद् विद्वांसो यदविद्वांसः, एनांसि चकृमा वयम्। यूयं नस्तस्मान्मुञ्चत, विश्वेदेवाः सजोषसः।। 1।।

(वयं) हमने (यत् विद्वांसः) जो जानते हुए (यत् अविद्वांसः) जो न जानते हुए (एनांसि) पाप (चकृमा) किए हैं, (यूयं) आप (विश्वेदेवाः) सब विद्वान (सजोषसः) प्रीति के साथ (तस्मात्) उस पाप-समुदाय से (नः) हमको (मुञ्चत) पृथक् कर दो।

इसके पश्चात् अर्थसहित गायत्री का पाठ भी उसमें कराना चाहिए। फिर नीचे के मन्त्र से एक आहुति देकर पूर्णाहुति (ओं सर्वं वै पूर्णꣳस्वाहा) कर दीजिए।

ओम् अग्ने व्रतपते ! व्रतं चरिष्यामि, तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि।।

(व्रतपते, अग्ने) व्रतों के पालक हे विद्वद्गण व ईश्वर ! मैं (व्रतं) प्रण को (चरिष्यामि) पालन करूंगा (तत्) उसको करने में (शकेयम्) आपकी सहायता से समर्थ होऊं, (मे) मेरा (तत्) वह (राध्यताम्) पूरा हो। (अहम्) मैं (अनृतात्) झूठ से (इदं) इस (सत्यं) सत्य को (उपैमि) प्राप्त करता हूं।। इति।।

आर्य समाज की कुछ विभूतियां

प्रज्ञाचक्षु, स्वामी विरजानन्द सरस्वती
आर्य समाज के क्रान्ति की प्रथम संक्रामयित, अनार्ष ग्रन्थों पर सदा-सर्वदा के लिए अप्रीति, अरुचि थी। अष्टाध्यायी, महाभाष्य, वेदान्तसूत्र तथा अनेक शास्त्रों का अध्ययन किया करते थे। श्री विरजानन्द जी दयानन्द को अपने परमप्रिय, प्रतिभावन शिष्यरत्न मानते थे।

स्वामी दयानन्द सरस्वती (सन् 1824-1883)
आर्य समाज के प्रर्वतक वैदिकधर्म पुनरुद्धारक, आचार्यों के आचार्य परिवाट् सम्राट सकल शास्त्र निष्णात, अलौकिक एवं अद्भुत तार्किक, सर्वतंत्र स्वतंत्र, ब्राह्मण कुल भास्कर, दिग्गज मेधावी, मानवकुल पूज्य।

स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती (जन्म फाल्गुन बदी 13 सन् 1857—देहांत दिसम्बर 1926)
संन्यास से पूर्व नाम लाला मुन्शीराम, 12 अप्रैल 1917 को संन्यासी बने। आपने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की। 'सद्धर्म प्रचारक' पत्र प्रारम्भ किया। शुद्धि आन्दोलन में सक्रिय, मुसलिम हत्यारे द्वारा बलिदान।

स्वामी स्वतन्त्रानन्द सरस्वती (सन् 1877-1954)

लाहौर उपदेशक महाविद्यालय के आचार्य, दयानन्द मठ दीनानगर के संस्थापक, स्पष्ट वक्ता, अपरिग्रह के मूर्तिमान रूप, दृढ़ समय-पालक, कटु सत्य कहने के साहसी, शिरोमणि संन्यासी थे।

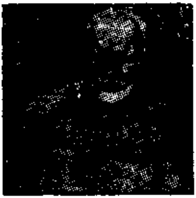

वीतराग स्वामी सर्वदानन्द जी (सन् 1855-1941)

त्यागी, तपस्वी, योगी, विरक्त, गौरवशाली, मूर्धन्य, स्थितप्रज्ञता की जीवित मूर्ति, परमार्थ संलग्न, परमश्रेष्ठ।

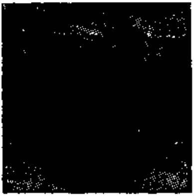

स्वामी वेदानन्द तीर्थ (सन् 1894-1956)

वेदों के उद्भट विद्वान, अद्भुत व्याख्याता, प्रभावशाली लेखक, बहुभाषाविज्ञ, दशाधिक वेदव्याख्या ग्रन्थ प्रणेता, दयानन्द संन्यासी वानप्रस्थ मंडल के संस्थापक, अनेक अमूल्य ग्रन्थों के लेखक थे।

पंजाब केसरी लाला लाजपतराय
(सन् 1865-1928)
डी.ए.वी. कालिज लाहौर के स्तम्भ, मूर्धन्य वकील, कट्टर देशभक्त, निर्भीक शीर्षस्थ नेता, अद्‌भुत वाक्‌शक्ति, साहसी, उत्साही, बहुमुखी प्रतिभाशाली, क्रान्तिकारी थे।

मुनिवर पं. गुरुदत्त विद्यार्थी
(सन् 1864-1940)
आर्यसमाज के मनीषी, उत्कृष्ट विद्वान्, साधुस्वभाव, वैराग्य वृत्ति, तीव्र प्रतिभा, कुशाग्र बुद्धि, ऋषिभक्त, नास्तिक से आस्तिक।

महात्मा हंसराज (सन् 1864-1938)
दयानन्द ऐंग्लो-वैदिक कॉलिज लाहौर के अवैतनिक प्राचार्य, समाज-सुधारक, विद्या, धर्म, आत्मबलिदान, तप और त्याग के मूर्तिमन्त रूप, महामानव।

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती
(सन् 1762-1813)

संन्यास से पूर्वनाम श्री कृपाराम, 1901 में संन्यास की दीक्षा ग्रहण की। आपने पाँच गुरुकुल स्थापित किए। महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार) अत्यन्त प्रसिद्ध है। आपने 250 ट्रैक्ट लिखे, कर्म और योग पर विश्वास करते थे, दृढ़ ईश्वर-विश्वासी थे।

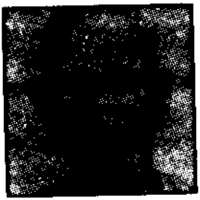

महात्मा नारायण स्वामी (सन् 1869-1947)

कर्मयोगी, आर्यसमाज के उज्ज्वल रत्न, ऋषि-भक्त, लगनशील सेवाभावी, गुरुकुल वृन्दावन के आचार्य, हैदराबाद सत्याग्रह-संग्राम के प्रथम सर्वाधिकारी, अनेक पुस्तकों के लेखक थे आप।

धर्मवीर पं. लेखराम (सन् 1858-1902)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में उपदेशक, सुयोग्य उपदेशक, शास्त्रार्थ महारथी, प्रतिभाशाली लेखक, आपने महर्षि दयानन्द की जीवनी लिखी है जो अभूतपूर्व है, उच्चकोटि के आस्तिक थे। वैदिक धर्म के प्रचार में अपने प्राणों की बलि दी।

महात्मा आनन्द स्वामी (सन् 1826-1920)
पजाबी आर्यों के प्राण, प्रभावशाली एवं भक्ति भावी, व्याख्यानदाता, योग में कृत-परिश्रम, देश-विदेशों में वेद-प्रचारक, हैदराबाद सत्याग्रह संग्राम के तृतीय सर्वाधिकारी।

पं. प्रकाशवीर शास्त्री (सन् 1923)
आर्यसमाज के शीर्षस्थ राजनीतिक नेता, संसद सदस्य, कुशल प्रबन्धक, प्रभावशाली व्याख्यानदाता, उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष।

महाशय राजपाल (सन् 1886-1929)
अत्यन्त सौम्य एवं शान्त प्रकृति वाले, परिश्रमी, कर्तव्यपरायण, धार्मिक पुस्तक प्रकाशक, 'रंगीला रसूल' ग्रन्थ के प्रकाशक, अमर बलिदानी हुतात्मा।

गायत्री-गान

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

'ओम्' हो रक्षक हमारे, सब गुणों की खान हो।
'भूः' सदा सब प्राणियों में, प्राण के भी प्राण हो।।
'भुवः' सब दुःखों को करते, दूर कृपानिधान हो।
'स्वः' सदा सुखरूप सुखमय, सुखद सुखधि महान् हो।।
'तत्' वही सुप्रसिद्ध ब्रह्म, देववर्णित सार हो।
देव 'सवितुः' सर्व उत्पादक, हो, पालनहार हो।।
शुभ 'वरेण्यम्' वरण करने योग्य भगवन् आप हो।
शुद्ध 'भर्गः' मलरहित, निर्लेप हो, निष्पाप हो।।
दिव्यगुण 'देवस्य' दिव्य-स्वरूप देव अनूप के।
'धीमहि' धारें हृदय में, दिव्यगुण सब आपके।।
'धियो यो नः' वह हमारी, बुद्धियों का हित करें।
'अमर' 'प्रचोदयात्' नित, सन्मार्ग पर प्रेरित करें।।

यज्ञ-प्रार्थना

यज्ञरूप प्रभो ! हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल-कपट को, मानसिक बल दीजिए।।
वेद की गायें ऋचाएं, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोकसागर से तरें।।
अश्वमेधादिक रचाएं, यज्ञ पर-उपकार को।
धर्म-मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को।।
नित्य श्रद्धा-भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें।।
रोग-पीड़ित विश्व के सन्ताप सब हरते रहें।
भावना मिट जाए मन से पाप अत्याचार की।
कामनाएं पूर्ण होवें यज्ञ से नर-नार की।।
लाभकारी हो हवन हर जीवधारी के लिए।
वायुजल सर्वत्र हों शुभ गन्ध को धारण किए।।
स्वार्थ-भाव मिटे हमारे, प्रेम-पथ विस्तार हो।
'इदन्न मम' का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो।।
प्रेम-रस में तृप्त होकर वन्दना हम कर रहे।
नाथ करुणारूप करुणा आपकी सब पर रहे।।

वैदिक आरती

ओ३म् जय जगदीश पिता, प्रभु जय जगदीश पिता।।
विश्व विरंचि विधाता, जगत्राता सविता।।ओ०।।
अनन्त अनादि अजन्मा, अविचल अविनाशी।
सत्य सनातन स्वामी, शंकर सुखराशि।।ओ०।।
सेवक-जन सुखदायक, जननायक तुम हो।
शुभ सुख शान्ति सुमंगल, वरदायक तुम हो।।ओ०।।
मैं सेवक शरणागत, तुम मेरे स्वामी।
हृदय-पटल में प्रगटो, प्रभु अन्तरयामी।।ओ०।।
काम क्रोध मद मोह कपट, छल व्यापें नहिं मन में।
लगन लगे मम मन की, गुण तव वर्णन में।।ओ०।।
नित्य निरंजन निशिदिन, तेरो ही जाप करें।
तव प्रताप से स्वामी, तीनों ही ताप हरें।।ओ०।।
पतित-उधारण तारण, शरणागत तेरी।
भूले न भटके भ्रम में , निर्मल मति मेरी।।ओ०।।
शुद्ध बुद्धि से मन में तेरो ही वरण करें।
सब विधि छल-बल तज के, तेरी शरण पड़ें।।ओ०।।

ऋग्वेद का अंतिम सूक्त

सत्संग के उपरान्त निम्नलिखित ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त के चार मन्त्रों का सम्मिलित पाठ होना चाहिए

ओ३म् सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ। इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर।। 1।। ऋ० 10। 191। 1।।

हे (वृषन्) बलवान् और (आर्य) श्रेष्ठ (अग्ने) तेजस्वी ईश्वर ! (विश्वानि) सब पदार्थों को (इत्) निश्चय से (संसमिद्युवसे) एकत्र करके सम्मिलित करते हो और (इळस्पदे) भूमि अथवा वाणी के स्थान में (सम् इध्यसे) उत्तम प्रकार से प्रकाशित हो। इसलिए (सः) वह तुम (नः) हम सबके लिए (वसूनि) सब प्रकार से निवास, साधन, धन (आभर) प्राप्त कराओ।

ओ३म् संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथापूर्वे संजानाना उपासते।। 2।।

ऋ० 10।। 191। 2।।

हे भक्तो ! तुम सब (संगच्छध्वं) एक होकर प्रगति करो, (संवदध्वं) एक-दूसरे से मिलकर अच्छी प्रकार बोलो, (वः मनांसि) तुम सबके मन (सं जानताम्) उत्तम संस्कारों से

युक्त हों तथा (पूर्वे) पूर्वकालीन (संजानाना देवाः) उत्तम ज्ञानी और व्यवहार-चतुर लोग (यथा) जिस प्रकार (भागं) अपने कर्त्तव्य का भाग (उपासते) करते आए हैं, उसी प्रकार तुम भी अपना कर्तव्य करते जाओ।

ओ३म् समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः। समानेन वो हविषा जुहोमि।। 3।। **ऋ० 10। 191।। 3।।**

तुम सबका (मन्त्रः) विचार (समानः) एक हो, (समितिः) तुम्हारी सभा (समानी) एक जैसी हो, (मनः समान) तुम सबके मन एक विचार से युक्त हों, (एषां चित्तं सह) इन सबका चित्त भी सबके साथ ही हो, (वः) तुम सबको (समानं मन्त्रम्) एक ही विचार से (अभिमन्त्रये) युक्त करता हूं और (वः) तुम सबको (समानेन हविषा) एक प्रकार के अन्न और उपयोग (जुहोमि) देता हूँ।

ओ३म् समानी वः आकूतिः समाना हृदयानि वः। समान-मस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।। **ऋ० 10। 191। 4।।**

(वः आकूतिः) तुम सबका ध्येय समान ही हो। (वः हृदयानि) तुम सबके हृदय समान हों। (वः मनः) तुम सबका

मन (समानम् अस्तु) समान हो (यथा) जिससे (वः) तुम सबका व्यवहार (सह सु असति) समान होवे।

संगठन-गीत

हे प्रभो, तुम शक्तिशाली हो, बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं, कीजिए धन-वृष्टि को।।
प्रेम से मिलकर चलो, बोलो, सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भांति तुम, कर्तव्य के मानी बनो।।
हों विचार समान सबके, चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूँ बराबर, भोग्य पा सब नेक हों।।
हों सभी के दिल तथा संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से जिससे बढ़े सुख सम्पदा।।

शान्ति-पाठ

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳशान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्ति : सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः।